पर्वाधिराज पर्युषण पर्व
पर
एक सद्गृहस्थ की भावना

तीर्थंकर परमात्मा का पावन जन्म-प्रसग त्रिभुवन मे एक अनोखा वातावरण फैला देता है। नरक मे भी एक क्षण के लिये उजियारा छा जाता है। समस्त सृष्टि आनन्द से झूमने लगती है। सदा आनन्द-प्रमोद मे मस्त रहने वाले देवो के तथा ५६ दिक्कुमारिकाओ के आसन कम्पित होते है। भक्ति-सभर हृदय से विशाल परिवार के साथ ५६ दिक्बालिकाये अपना कर्तव्य निभाने आती है।

देवगण भी मेरु पर्वत के शिखर पर परमात्मा का अभिषेक करके अपने कर्म मैल को दूर हटाते है।

इसी पावन प्रसग की स्मृति मे, हम प्रभु के जन्माभिषेक को स्नात्र-महोत्सव के रूप मे मनाते है और भावना करते है कि हमे भी प्रभुजी का साक्षात् जन्म महोत्सव मनाने का अवसर प्राप्त हो।

सौजन्य से—एक सद्गृहस्थ की ओर से

मणिभद्र

32वाँ पुष्प
वि० सं० 2047

महावीर जन्म वाचना दिवस

भादवा सुदी 1 मंगलवार, दिनांक 21 अगस्त, 1990
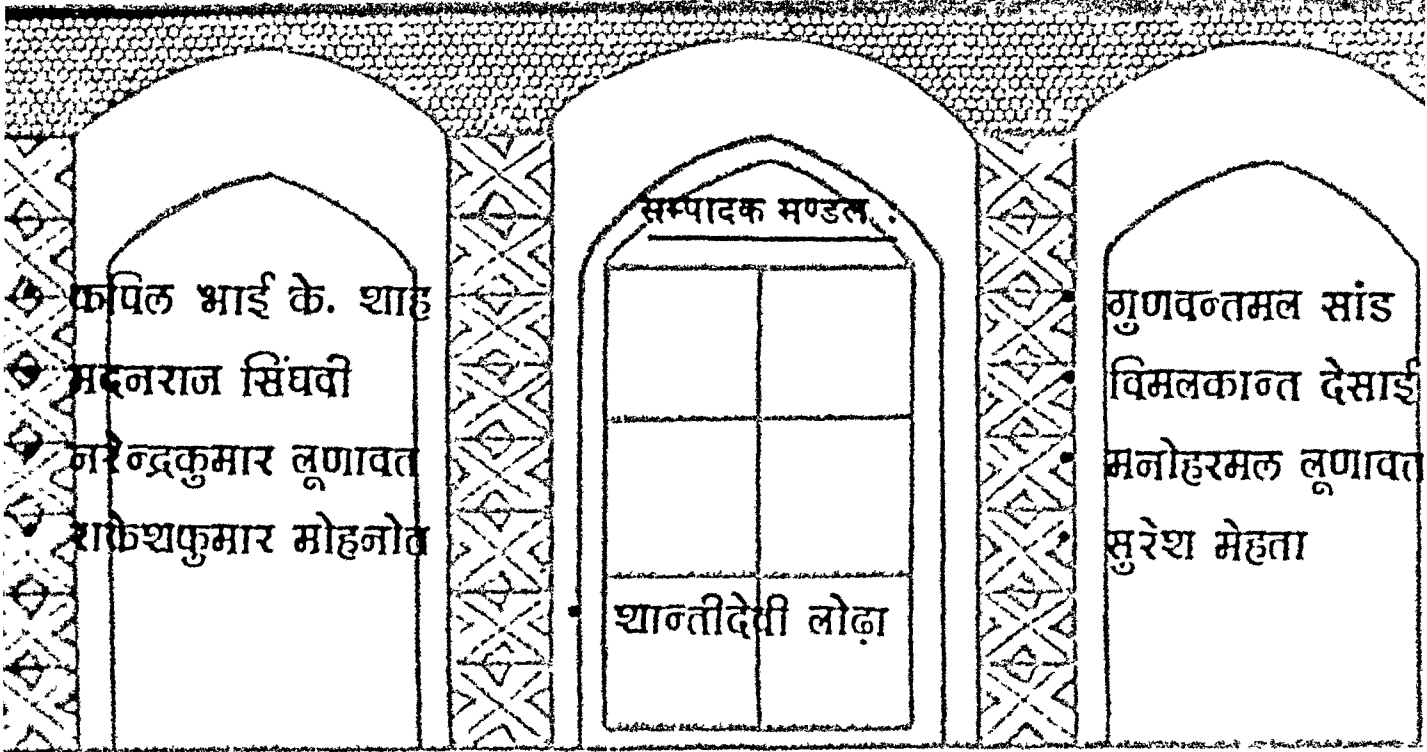
श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ

का

वार्षिक मुख-पत्र

कार्यालय :
आत्मानन्द सभा भवन, घी वालों का रास्ता
जयपुर

स्तुति

कल्लाण–कद पढम जिणिद,
सति तओ नेमि जिण मुणिद,
पास पयास सुगुणिक्क – ठाण,
भत्तई वदे सिरि–वद्धमाण ॥ १ ॥

अपार – ससार – समुद्द पार,
पत्ता सिव दित्तु सुईक्क – सार,
सव्वे जिणिदा सुरविद–वदा,
कल्लाण – वल्लीण विसाल – कदा ॥ २ ॥

निव्वाण मग्गे वरजाण कप्प,
पणासिया – सेस – कुवाई दप्प,
मय जिणाण सरण बुहाण,
नमामि निच्च तिजगप्पहाण ॥ ३ ॥

कुदिदु – गोक्खीर – तुसार वन्ना,
सरोज – हत्था कमले निसण्णा,
वाए – सिरी पुत्थय–वग्ग–हत्था,
सुहाय सा अम्ह सया पसत्था ॥ ४ ॥

इस स्तुति की प्रथम गाथा मे श्री ऋषभ देव, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर स्वामी इन पाच भगवानो की, दूसरी गाथा में सर्व जिनेश्वरो की तीसरी गाथा मे ज्ञान की और चौथी गाथा मे सरस्वती देवी की स्तुति की गई है ।

❖
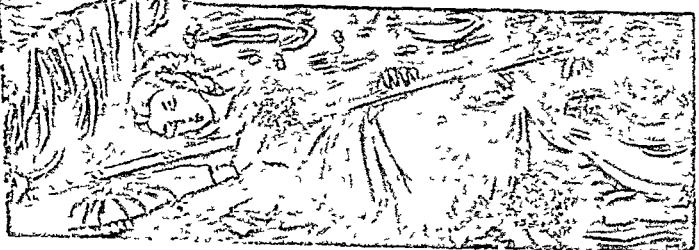
सम्पादकीय

श्री पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के महावीर जन्म वाचना दिवस पर श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर के वार्षिक मुख-पत्र 'मणिभद्र' का यह 32वां पुष्प आप लोगों की सेवा में प्रस्तुत करते हुये हमें अति प्रसन्नता हो रही है ।

गत वर्ष संघ के प्रबल पुण्योदय से तपस्वी मुनिराज श्री नित्यवर्धन सागरजी महाराज साहब एवं बालमुनि श्री धर्मयश सागरजी महाराज साहब ठाणा 2 का चातुर्मास अत्यन्त उल्लास एवं आनन्द के वातावरण में सम्पन्न हुआ ।

इस वर्ष पूज्य आचार्य देव श्री ह्रींकारसूरीजी महाराज साहब का जयपुर चातुर्मास होना था तथा नागेश्वर तीर्थ में जयपुर चातुर्मास की जय भी बुला दी गई थी लेकिन उनकी अठाई की तपस्या शुरू होने एवं स्वास्थ्य अनुकूल न होने से उन्होंने जयपुर आने में अपनी असमर्थता प्रगट की । अतः जयपुर में विराजित पूज्य साध्वी श्री अविचल श्रीजी महाराज साहब से विनती की गई और उन्होंने संघ की विनती को मान देकर प्रत्येक चतुर्दशी एवं पर्युषण पर्व की आराधना कराने हेतु पूज्य साध्वी श्री प्रियदर्शना श्रीजी महाराज साहब आदि को भेजने की स्वीकृति प्रदान की । इस प्रकार इस वर्ष साध्वीजी महाराज साहब की निश्रा में ही पर्युषण पर्व की आराधनाएँ सम्पन्न हो रही हैं ।

मणिभद्र जयपुर तपागच्छ संघ का मुखपत्र है जिसके द्वारा समस्त आचार्यों, साधु-साध्वियों एवं विभिन्न संघ के अगेवान श्रावकों को हर वर्ष इस संघ की गतिविधियों का पूर्ण विवरण भेजा जाता है तथा साथ ही आध्यात्मिक एवं ज्ञानवर्धक लेख भी इसमें प्रकाशित किये जाते हैं ताकि जैन समाज में धार्मिक भावनाओं की वृद्धि हो ।

मणिभद्र के इस 32वें अंक में प्रकाशन के लिये पूज्य आचार्य भगवन्तों एवं साधु-साध्वी महाराज साहब एवं विद्वान् लेखकों ने विद्वतापूर्ण लेख भेज कर हमें जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये सम्पादक मण्डल उन सभी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है । मणिभद्र में प्रकाशित लेखों में विचार विद्वान् लेखकों के व्यक्तिगत हैं । अतः सम्पादक मण्डल इसके लिये उत्तरदायी नहीं है ।

सम्पादक मण्डल इस अंक के प्रकाशन में विज्ञापनदाताओं द्वारा आर्थिक सहयोग प्रदान करने के लिये भी आभार एवं धन्यवाद प्रगट करता है ।

इस अंक में जयपुर स्थित नये मन्दिर के मूलनायक श्री ऋषभदेव भगवान का सुन्दर एवं दर्शनीय चित्र प्रकाशित किया गया है जिसकी पुनः प्रतिष्ठा अभी हाल ही में सम्पन्न हुई है ।

भाद्रपद सुदी 1, सं० 2047
दिनांक 21-8-90

मणिभद्र सम्पादक मण्डल :
आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर
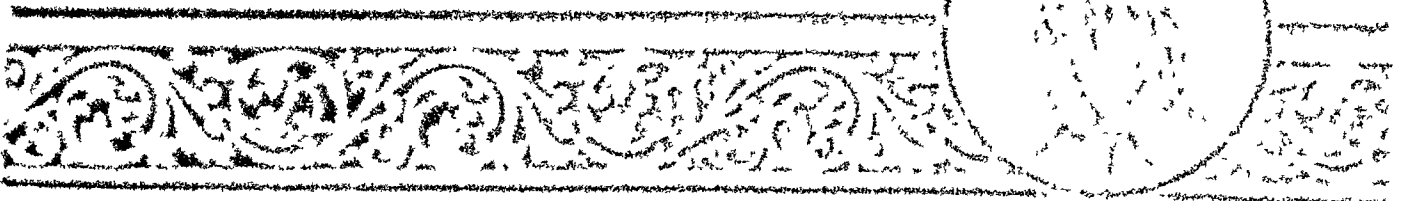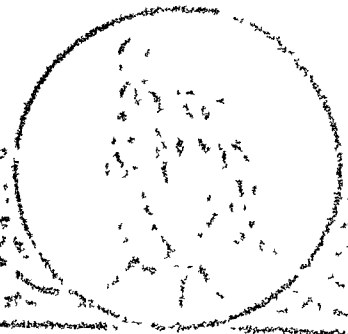
श्री जैन श्वे तपागच्छ सघ, जयपुर
की
स्थायी प्रवृत्तियाँ

1. श्री सुमति नाथ भगवान का तपागच्छ मन्दिर
   घी वालो का रास्ता, जयपुर
2. श्री सीमधर स्वामी मन्दिर
   पाच भाइयो की कोठी, जनता कॉलोनी, जयपुर
3. श्री रिखव देव स्वामी मन्दिर
   ग्राम वरखेडा, शिवदासपुरा (जयपुर)
4. श्री शान्ति नाथ स्वामी मन्दिर
   ग्राम चन्दलाई, शिवदासपुरा (जयपुर)
5. श्री जैन चित्रकला दीर्घा एव भगवान महावीर के जीवन चरित्र का भीति चित्रो मे सुन्दरतम चित्रण
   सुमति नाथ भगवान का तपागच्छ मन्दिर
   घी वालो का रास्ता, जयपुर
6. श्री आत्मानन्द सभा भवन (उपाश्रय)
   घी वालो का रास्ता, जयपुर
7. श्री जैन श्वेताम्वर तपागच्छ उपाश्रय
   मारूजी का चौक, जयपुर
8. श्री वर्धमान आयम्बिल शाला
   आत्मानन्द सभा भवन, घी वालो का रास्ता, जयपुर
9. श्री जैन श्वे भोजनशाला
   आत्मानन्द सभा भवन, घी वालो का रास्ता, जयपुर
10. श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला
    आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर
11. श्री जैन श्वे मित्र मण्डल पुस्तकालय एव
    सुमति ज्ञान भण्डार
    आत्मानन्द सभा भवन, घी वालो का रास्ता, जयपुर
12. महिला उद्योग शाला (सिलाई व बुनाई)
    आत्मानन्द सभा भवन, घी वालो का रास्ता, जयपुर
13. मणिभद्र भण्डार, घी वालो का रास्ता, जयपुर
14. "मणिभद्र" वार्षिक मुख पत्र

❖

"मानव-जीवन"

सरिता की क्षणिक लहर का प्रतिविम्ब मनुज जीवन में ।
क्षणभंगुर जीवन उनका ज्यों पुष्प बिखरता वन में ।
उत्पत्ति-विनाश जगत में प्रतिपल होता रहता है ।
सन्ध्या उषा का आना क्रम से होता रहता है ।
चंचल समीर के झोंके प्रतिक्षण है बढ़ते आते ।
निज क्षणभंगुर जीवन की वे करुण रागिनी गाते ।
अर्पण कर देते तन-मन वे मनुजों के रक्षण में ।
पर रत रहता है मानव निशि दिन अपने भक्षण में ।
तमपूर्ण निराश निशा को भी इन्दु बनाता उज्ज्वल ।
धूमिल श्यामल रजनी को पहना देता सित अंचल ।
कमनीय कमल पल्लव के झूले में मोद मनाता ।
निज वास पंक में लखकर मनही मन रुदन मचाता ।
ज्यों शुष्क वृक्ष की शाखें फिर नव पल्लव पाती हैं ।
मानव जीवन पतझड़ में घड़ियाँ मधुमय आती हैं ।
आतप से शुष्क वनों को वर्षा कर देती शीतल ।
मानव की चाह पूर्ण कर करती सीना मरुस्थल ।
मानव-जीवन में सुख-दुःख दोनों ही क्रम से आते ।
अज्ञान तिमिर में फँसकर हम समझ न कुछ भी पाते ।

रचयिता : शान्ती देवी बोहरा

अनुक्रमणिका

श्री आदिजिन स्तवन

माता मरुदेवीना नद ! देखी ताहरी मूरति
मारु मन लोभाणु जी ।

करुणानागर करुणासागर, काया कचनवान,
घोरी लछन पाउले काइ, धनुप पाचसें मान
माता० ॥ १ ॥

त्रिगडे वेसी धर्म कहता, सुणे परपदा वार
जोजनगामिनी वाणी मीठी वरसती जलधार
माता० ॥ २ ॥

उरवशी रुडी अपच्छराने, रामा छे मनरग,
पाये नेऊर रणझणे काइ, करती नाटारभ
माता० ॥ ३ ॥

तु हि ब्रह्मा तु हि विधाता, तु जग तारणहार,
तुज सरिखो नहि देव जगतमा, अडवडिया आधार
माता० ॥ ४ ॥

तु हि भ्राता, तु हि त्राता तु हि जगतनो देव,
सुरनर किन्नर वासुदेवा, करता तुज पद सेव
माता० ॥ ५ ॥

श्री सिद्धाचल तीरथ केरो, राजा ऋषभ जिणद,
कीर्ति करे माणेकमुनि ताहरी, टालो भव भय फद
माता० ॥ ६ ॥

卐 ॐ ह्रीं अर्हं नमः 卐

श्रीनमस्कार-महामन्त्र-माहात्म्य

लेखक
परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय सुशील सूरीश्वरजी महाराज

(१) श्रीनमस्कार महामन्त्र

णमो अरिहंताणं ॥ १ ॥ णमो सिद्धाणं ॥ २ ॥
णमो आयरियाणं ॥ ३ ॥ णमो उवज्झायाणं ॥ ४ ॥
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ५ ॥ एसो पंचनमुक्कारो ॥ ६ ॥
सव्वपावप्पणासणो ॥ ७ ॥ मंगलाणं च सव्वेसिं ॥ ८ ॥
पढमं हवइ मंगलं ॥ ९ ॥

(२) श्री नमस्कार महामन्त्र का अर्थ

१. "नमो अरिहंताणं" ॥ १ ॥

अर्थ—'अरिहंत = तीर्थंकर परमात्मा को नमस्कार हो।'

अर्थात्—धर्मतीर्थ के स्थापक, चौत्तीश अतिशय और पेंत्तीश वाणी के गुणों से समलंकृत, अशोकवृक्षादि बारह गुणों से सुशोभित ऐसे विश्व के परमहितकारी श्री अरिहंत परमात्मा को नमस्कार हो।

२. "नमो सिद्धाणं" ॥ २ ॥

अर्थ—'सिद्ध—सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो।'

अर्थात्—अष्टकर्म से रहित, परमपदरूप श्री सिद्धिगति को प्राप्त, कृतकृत्य और अनंत-ज्ञानादि अष्टगुणों से समलंकृत ऐसे परमात्मस्वरूप 'श्री सिद्ध भगवन्त' को नमस्कार हो।

३. "नमो आयरियाणं" ॥ ३ ॥

अर्थ—आचार्य महाराज को नमस्कार हो।

अर्थात्—ज्ञानादिपंचाचार के पालन करने वाले-कराने वाले तथा श्री तीर्थंकर भगवन्त के अभाव में जिनशासन का सम्यग् संचालन करने वाले एवं चतुर्विध संघ के नायक ऐसे छत्तीस-छत्तीसी गुणों से समलंकृत श्री आचार्य महाराज को नमस्कार हो।

४. "नमो उवज्झायाणं" ॥ ४ ॥

अर्थ—उपाध्याय महाराज को नमस्कार हो।

- ☐ जैनशासन-जैनमार्ग का **'अमूल्य जवाहिर'** है ।
- ☐ जिनागम-जिनशास्त्र समस्त का **'असाधारण रहस्य'** है ।
- ☐ चौदह पूर्व का **'अनुपम सार'** है ।
- ☐ पच परमेष्ठी का **'अलौकिक समवतार'** है ।
- ☐ पच परमेष्ठी और उनके १०८ सद्गुणो की **'दिव्य पुष्प रत्नमाला'** है ।
- ☐ सर्व पापो का विनाशक **'अमोघ शस्त्र'** है ।
- ☐ समस्त मगलो का **'मुख्य मगल'** है ।
- ☐ सकल कष्ट-सकट, आपत्ति-विपत्ति तथा दु ख इत्यादि निवारक **'परम पावन जाप'** है ।
- ☐ सर्व प्रकार की ऋद्धि तथा अष्ट प्रकार की महासिद्धि एव सुख-सम्पत्ति इत्यादि दायक **'उत्तम कल्पवृक्ष'** है ।
- ☐ भवसिन्धु तारक **'भव्य जहाज-नौका-स्टीमर'** है ।
- ☐ भव्यात्मा को परमात्मा एव मुक्तात्मा बनाने वाला **'सिद्धिदायक सिद्धमत्र'** है ।
- ☐ अपनी आत्मा का अज्ञान तिमिर को सर्वथा दूर करने वाला और निज आत्ममन्दिर मे तथा सारे विश्व मे सद्ज्ञान का प्रकाश करने वाला देदीप्यमान **'तेजस्वी सूर्य'** है ।
- ☐ भाव नमस्कार सर्वोत्तम दिव्यतेज' है ।
- ☐ स्वर्ग और मोक्ष का **'देदीप्यमान द्वार'** है ।
- ☐ दुर्गति का विनाशक प्रलयकाल का **'महादावानल-अग्नि'** है ।
- ☐ समस्त श्री जैनशास्त्रो का, सारी द्वादशाङ्गी का और कल्याण का **'अद्वितीय भण्डार'** है ।
- ☐ श्री पच मगल-महाश्रुतस्कन्ध है ।
- ☐ अनादि अनतकालीन शाश्वत महामन्त्र है ।

(५) श्री नमस्कार महामन्त्र की उद्घोषणा

विश्व मे श्री नमस्कार महामन्त्र की उद्घोषणा यही है कि—

ताव न जायइ चित्तेण, चितिय च वायाए ।
काएण समाढत्त, जाव न सरिओ णमुक्कारो ।। १ ।।

अर्थ—पचपरमेष्ठि श्री नमस्कार महामन्त्र को जहा तक स्मरण किया नही है, वहा तक ही चित्त से चितित, वचन से प्रार्थित और काया से प्रारम्भ किया हुआ कार्य नही होता ।

अर्थात्—श्री नमस्कार महामन्त्र के स्मरण से, ध्यान से, जाप से और उसकी सम्यग् आराधना-उपासना से सर्वकार्य की सिद्धि अवश्य ही होती है । अन्त मे मोक्ष का शाश्वत सुख भी मिलता है । ऐसे श्री नमस्कार महामन्त्र की सर्वदा जय हो ।

तृष्णा तरुणी के तूफान

• वही तीर्थोधारक, शासन प्रभावक आचार्य श्री विजय यशोभद्र सूरीश्वरजी महाराज हिम्मतनगर

☐ हम यदि कितना ही धर्मानुष्ठान करें, किन्तु भीतर में भोग की, धन की, सुख की, यश की, प्रतिष्ठा की तृष्णा नहीं मिटे तो हमारी सभी साधना निष्फल हो जाती हैं—

संसार के रंगमंच पर उदासीन मुद्रा में मोह महाराजा बैठे थे। उनके चारों तरफ उनके सभी सेवक भी चिंतित थे। चूंकि स्वामी यदि शोक संतप्त हो तो स्वाभाविक है कि सेवक वर्ग मायूसी में घिर जाता है। मोह महाराजा के मंत्री मिथ्यात्व ने स्वामी से पूछा कि "हे प्रभो! आप उदास क्यों हो? आपका इतना विशाल साम्राज्य है। समग्र विश्व पर आपका व्यापक प्रभाव है। संसार वृत्ति सभी प्राणी आपकी आज्ञा के आधीन है, फिर चिन्ता किस बात की?" प्रत्युत्तर में महाराजा ने बताया कि "कुछ समय से मेरे शत्रु प्रतिस्पर्धी धर्मराजा के प्रभाव से कुछ प्राणी सहसा मेरे प्रभाव से बाहर निकल कर धर्मराजा के वश होते जा रहे है। मेरी आज्ञा का अनादर करते है। मेरे शासन की अवगणना कर मेरे दुश्मन के पास दौड़े जा रहे है। यदि यही सिलसिला चालू रहा तो मेरा साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो जायेगा। मुझे मेरा राज्य छोड़कर कहीं कोने में छिप जाना पड़ेगा। आज इस सभी परेशानी से मैं चिंतित हूँ।" मैं सोचता हूँ कि मेरे परिवार में कोई ऐसा और पराक्रमशाली नर या नारी हो कि जो धर्मराजा के पास चोरी छुपी से पहुँचकर उनके भक्तों में फूट डाले एवं वहाँ से उनको भगाकर अपने साम्राज्य में वापस लावे।"

मिथ्यात्व मंत्री ने अपने स्वामी की चिन्ता का रहस्य जानकर कहा कि, "ऐसी छोटी-सी बात को लेकर आप क्यों परेशान हो रहे हो? यह तो हमारे लिये बांये हाथ का खेल है कि हम धर्मराजा के साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दें। आप चिन्ता न करें। शीघ्र ही मैं उनके लिए प्रयत्न करके बड़े चतुर जासूस को भेजता हूँ।" इतना कहने के बाद उन्होंने उपस्थित सदस्यों के सामने निगाह डाली तो सहसा कोने में खड़ी सुन्दर रूपवती युवती पर उनकी नजर पड़ी। शीघ्र उसे पास में बुलाई एवं मोहराजा से परिचय करवाया कि, "मालिक यह मेरी दासी तृष्णा तरुणी है। आपके मन की चिन्ता को यह पलभर में दूर करेगी। [illegible] यह ऐसी [illegible] को [illegible] वाली है, जिसमें दया, करुणा, [illegible], [illegible], धनवान् कोई भी हो [illegible] सभी

उसके पजे मे फँस जाते हैं। इसकी जादूभरी निगाहो से कोई बच नही सकता है।" इस प्रकार का परिचय देकर तृष्णा से कहा कि, "तुझे एक आदेश दिया जाता है कि फिलहाल अपने स्वामी के प्रतिस्पर्धी धर्मराजा के अनुशासन मे सैकडो प्राणी जा रहे हैं, उन सभी को तुझे वहाँ से पुन वेक टू पेवेलियन (महाराजा की छावणी) मे वापस लाना है। तेरा प्रभाव ससार के प्रत्येक विभाग मे फैला हुआ है, चाहे प्राणी का अग गल गया हो, सिर के बाल सफेद बन गये हो, दातो की पक्ति बिना मुख बदसूरत बन गया हो, काया कापने से हाथ मे लकडी पकडनी पडती हो फिर भी तेरे प्रभाव से अर्थात् तृष्णा तरुणी से अलग नही हो सकते हैं। अत शीघ्र आप धर्मराजा के साम्राज्य मे पहुँच कर उनकी मायाजाल को नष्ट-भ्रष्ट कर सभी को वापस यहाँ ले आइए।"

तृष्णा तरुणी ने सहर्ष अपने मत्री का आदेश स्वीकार कर अपनी कार्यसिद्धि के लिए प्रस्थान किया। ज्योही उन्होने अपनी जासूसी से साधक समुदाय मे भेद डालना प्रारम्भ किया कि शीघ्र उन सभी की साधना का दिव्य महल टूटने लगे। हम यदि कितना ही धर्मानुष्ठान करें किन्तु भीतर में भोग की, धन की, सुख की, यश की, प्रतिष्ठा की तृष्णा नही मिटे तो हमारी सभी साधना निष्फल होती है। हमारी साधना के सत्प्रयत्नो को नष्ट करनेवाली यह तृष्णा तरुणी के तूफान से हमे सावधान रहना है।

सतो ने कहा है कि, "मानव को धन, सत्ता एव मान-प्रतिष्ठा की भूख कभी मिटती नही है। जब तक वह सतोषी बनकर जो प्राप्त है उनसे अपना निर्वाह न चला लेवे।" करोडो रुपया के मूल्यवान रत्नो का भण्डार था फिर भी राजगृही का मम्मण वर्षा ऋतु की घोर अधेरी रात मे दो काडा से बहती नदी से लकडी खीचकर लाता है। यह प्रभाव है तृष्णा का पाटली पुत्र के नद ने प्रजा का उत्पीडन करके नदी के उस पार सोने का पर्वत बनाया था। यही नटखट नारी तृष्णा के कारण वर्तमान मे भी चुनाव से पहले बडी-बडी बातें करने के बाद सत्ता प्राप्ति के पश्चात् स्वय के घर भरने की तृष्णा की वजह से आपाधापी, खीचा-तानी आदि के *नाटकीय* दृश्य देखने को मिल रहे हैं।

इन सभी अनर्थो का मूल तृष्णा ही है। इस भयकर काली नागिन को वश मे करने के लिए तो *न्यायाचार्य* पूज्य यशोविजयजी म श्री के पावनतम स्वर्णिय सदेश के रूप मे, "जागृति ज्ञानदृष्टिश्चेत् तृष्णा कृष्णा हि जागृक्ति" इस सूक्ति द्वारा तृष्णा रूपी काली नागिन को पकडने के लिए जागृक्ति मत्र समान ज्ञानदृष्टि आवश्यक है। सत्य-असत्य तथा कर्तव्य-अकर्तव्य का भेद एव हेय-ज्ञेय उपादेय की निर्मल जीवन व्यवहार पद्धति से ज्ञानदृष्टि प्राप्त करके साधना एव आराधना के आदर्श अमृत पान करने का स्वर्ण अवसर रूप पव शिरोमणि श्री पर्युषणा महापर्व के पावनतम दिवसो मे सस्कार एव शिक्षा के दिनो पाख को सबल बनाने वाली मणिभद्र-पत्रिका प्रकाशन के शुभ प्रयत्न की सफलता हेतु सैकडो शुभ कामना के साथ—

शुभ भवतु।

हमें जिनागम मिले हैं, यानी क्या मिला ?

• गच्छाधिपति पूज्य
आचार्य श्रीमद् विजय
भुवन भानुसूरिश्वरजी म. सा.
(कोयम्बतूर)

☐ आत्मा की अनन्य कार्य शक्ति, वाणी शक्ति व विचार शक्ति को उच्च संयम के पथ पर विनियुक्त कर उच्च सफलता को प्राप्त कराने वाले जिनागम ही हैं, क्योंकि वे ही उस सफलता का यथास्थित रास्ता दिखाते हैं—

आज विश्व के ऊपर दिन उगते ही नये-नये साहित्य का ढेर बाहर आ पड़ता है, क्या ये मानव प्रजा के साथ न्याय करते है ? यह सोचने जैसा है। वास्तव में तो इनके सामने 'जिनागम यानी जैन शास्त्र तो मानव प्रजा का अवश्य कल्याण करता है।' यह वर्तमान जैन प्रजा के धार्मिक जीवन से स्पष्ट दिखाई पड़ता है। तब सोचना यह है कि 'इन जिनागमों का पान कर पूर्व के जैन कैसे-कैसे मानव-हित के अद्भुत सृजन कर गये है ?' यह इतिहास बोलता है। इसलिए इन जिनागमों की पहचान करने की आवश्यकता है।

"विषम काले जिनबिंब-जिनागम भवियण
कुं आधारा।"

वर्तमान विषम काल में भव्य जीवों को तैरने के लिए दो साधन है—(1) एक साधन है जिनबिंब और (2) दूसरा साधन है जिनागम। इसमें भी जिनागम तो जिन-बिंब की पहचान कराता है और उसकी उपासना का प्रकार भी सिखाता है, जिससे ही जिनबिंब की उच्च उपासना कर सकते है। इसलिए जिनागम की तो बलिहारी-वाहवाही-बलिहारी है। मनुष्य को कितना भी धर्म करना हो और इसके लिए कष्ट उठाने की तैयारी भी हो एवं उपासना के अनुकूल संयोग भी हो, किन्तु अगर जिनागम न मिलें तो वह कैसे जिनबिंब का महत्त्व व उपासना-विधि जान सके ? क्या साधना कर सके ? वास्तविक सत्य यह है कि जिनागम जीवन को सार्थक करने का एक चोक्कस उपाय है। आत्मा को यावत् निगोद में से निकल कर इतने उच्च आर्य मानव-जन्म तक ऊँचे आने की जो अपूर्व सुन्दर स्थिति प्राप्त हुई है, और इसमें भी आराधना की सामग्री मिलने का जो महान् सद्भाग्य प्राप्त हुआ है, यह सार्थक तभी हो सके कि जब जिनागम का शरण लिया जाए।

मिली हुई तन-मन-धन की सम्पत्ति को यथार्थ सार्थक कराने वाले जिनागम है क्योंकि सच्चे दान और सच्चे त्याग को जिनागम ने ही सिखाया है। इसी प्रकार आत्मा की अनन्य कायशक्ति, वाणीशक्ति, व विचारशक्ति इत्यादि को उच्च संयम के पथ पर विनियुक्त कर उच्च सफलता को

प्राप्त कराने वाले जिनागम ही हैं, क्योकि वे ही उस सफलता का यथास्थित रास्ता दिखाते हैं। इसीलिए ही आचार्य भगवान् हरिभद्रसूरिजी महाराज ने ललकारा है—

"हा ! अणाहा कह हुन्ता, जइण हुतो जिणागमो।"

"अहो ! जगत् पर यदि जिनागम नहीं होते तो अनाथ ऐसे हमारा क्या होता ?"

हमे जिनागम से ही सनाथ हैं। अन्यथा यह काल कैसा ? सर्वज्ञ केवली मौजूद नही। मन पर्यवज्ञानी भी हयात नही हैं। अवधि-ज्ञानी भी विद्यमान नही। ऐसे समय में यदि मार्गदर्शक जिनागम हमे नही मिले होते, तो आज हम अनाथ ही होते। ऐसे हमारा क्या होता ?

जिनागम यानी ? (1) काया से भी अति मूल्यवान और (2) प्राण से भी अधिक प्रिय वस्तु ! (3) जिनागम यह अपूर्व खजाना ! (4) जिनागम यह भवोभव को उज्ज्वल करनेवाली उमदा चीज ! (5) यही अनत कल्याण का साधन ! इसलिए (6) यही उपास्य और यही आराध्य ! (7) रात-दिन यह आगम ही स्मरणीय और चितनीय ! (8) जीवन मे यही भावना करने योग्य, अर्थात् आत्मा को इन जिनागमो से ही भावित करने योग्य। जैसे वस्त्र अच्छे रग से रगित करने योग्य है वैसे आत्मा जिनागम से रगित करने योग्य है।

ऐसी अपूर्व वस्तु वैसे ही मिले भी कब ? व कहाँ से ? फिर, यहा यदि ऐसे प्राप्त उत्तम जिनागम की सेवा को छोडकर जगत् की सेवा किया करें, तो फिर कौन जाने कब आर्य मानव जन्म व जिनागम मिलेंगे ? जगत् मे सब मिलना आसान है और वह बार-बार भी मिल सकता है, किन्तु जिनागम बार-बार तो क्या, एक बार भी मिलना आसान नही ! महा मुश्किल है।

ऐसे महान् जिनागमो मे अपूर्व सुख और अचित्य उन्नति की प्राप्ति के लिए क्या-क्या नही दिखाया है ? कहिए कि—सुख और उन्नति का सच्चा रास्ता जिनागम ने ही दिखाया है। अहो ! कैसी अपूर्व उपलब्धि !

वास्तव मे जिनागम यह दीपक है। जैसे अघेरी गुफा मे चाहे जितना रत्नो का ढेर क्यो न हो ? किन्तु दीपक बिना ये कैसे ज्ञात हो सकते हैं ? और कैसे मिल पाते ? मोक्ष है, मोक्ष का उपाय है, किन्तु इन सबका सच्चा भान कराने वाला तो जिनागम ही है। जिनागम-स्वरूप चक्षु से ऐसे तारक पदार्थो का सत्य दर्शन करके ही कितनी ही आत्माएँ अल्पकाल मे आत्मा के महान् कल्याण को सिद्ध कर चुके हैं, व उन्होंने भव के भ्रमण को आमूलचूल नष्ट कर दिया है। असख्य-असख्य कालीन इकट्ठे हुए कर्म-बधनो को जीवो ने अति अल्पकाल मे जिनवाणी-जिनागम के प्रभाव से ही तोड दिये हैं। महावीर प्रभु के पास से त्रिपदी की जिनवाणी पाकर ही इन्द्रभूति आदि 11 गणधर उसी भव मे भव-बधनो को तोडकर मोक्ष मे चले गये और 99 करोड सोनैया की सम्पत्ति को छोडकर मुनि बने हुए जम्बूकुमार भी सुधर्मा स्वामी के पास से द्वादशागी-जिनागम प्राप्त कर श्रुत केवली बने, आगे चलकर केवलज्ञानी और मुक्त बन गये। एक दिन के मिथ्यादृष्टि और उद्भरवादी बनने की लालसा वाले गोविंद ब्राह्मण ने जब जिनागम का अवगाहन किया उसी समय ही वे मिथ्यात्व से मुक्त बनकर

सुप्रसिद्ध निर्युक्तिकार गोविंदाचार्य बन गये। जिनागम के प्रभाव से ही आचार्य भगवान् हरिभद्रसूरिजी महाराज 1444 शास्त्र के रचयिता बनें।

महाविद्वान् पुरोहित हरिभद्र ब्राह्मण को ज्ञान की पिपासा थी, इसलिए उनको प्रतिज्ञा थी कि—'जगत् का कोई भी शास्त्र मैं न समझ पाऊँ तो उसे समझने के लिए चाहे किसी भी व्यक्ति का गुलाम ही क्यों न बनना पड़े? किन्तु ज्ञान प्राप्ति करलूं।' इनको एक बार ऐसा अवसर आया कि—जैन शास्त्र की 'चक्की दुगं....' गाथा का अर्थ वे न समझ पाये। फिर इसे समझने के लिए हरिभद्र ब्राह्मण अपनी प्रतिज्ञा से एक कदम भी पीछे नहीं हटे। गृहस्थावस्था के कपड़े उतार कर साधुपन का वेश स्वीकार कर लिया। क्यों? एक जिनागम की गाथा का अर्थ जानने के लिए। हमें चारित्र लेना हो तो किस हेतु से लेना? मोक्ष के लिए! अरे! मोक्ष तो बाद में मिलने वाला है, परन्तु चारित्र-साधुपन लेना है तो तुरन्त किस हेतु के लिए लेना? कहिए, जिनागम का ज्ञान प्राप्त करने के लिए। ऐसी ज्ञान-प्राप्ति यह कैसा सुन्दर और सर्व श्रेष्ठ ध्येय! फिर आप इसके लिए भी चारित्र क्यों नहीं लेते? कहिए जिनागम के ज्ञान की ऐसी भूख-लगन नहीं है। क्यों नहीं है? ऐसा कहिए कि—'पैसे बिना नहीं चले', इसलिए पैसे की लगन है, किन्तु 'जिनागम का ज्ञान के बिना चले' ऐसा मन में है, इसलिए इसकी भूख-लगन नहीं है।

प्रतिज्ञा यानी प्राण! हरिभद्र पुरोहित के आत्मा में क्या बसा होगा? "मेरी प्रतिज्ञा! मैं मानव! मानवी को प्रतिज्ञा पालन करनी ही चाहिए। यह सद्गति का मार्ग है। इसमें मार्गानुसारिता है। मानवता है। इसके लिए ऋद्धि वैभव को हानि आए तो भी परवा नहीं, किन्तु शास्त्र ज्ञान के लिए की गयी पवित्र प्रतिज्ञा का भंग नहीं होना चाहिए।" इसके लिए उन्होंने चारित्र लिया। चारित्र लेकर ऐसा शास्त्राध्ययन किया, इतना अध्ययन किया कि समर्थ शास्त्रकार महान् आचार्य बनें। जैन शासन की बेनमून विशिष्टता जानने के बाद उन्होंने बेधड़क जाहिर किया कि—'यह जिनागम! जगत् में कहीं भी देखने को नहीं मिले, ऐसे ये शास्त्र हैं! इनका ज्ञान माने ज्ञान का महासागर! मेरी चौदह विद्या तो जिनागम के विशाल 14 पूर्व के ज्ञान के आगे कुछ नहीं है।' यद्यपि 'पूर्व शास्त्रों का ज्ञान आज नष्ट हो गया है, फिर भी नष्ट हुआ तो भी भरुच! फरवतूटा भी सोने का घड़ा!

जो आगम मौजूद है, इसके भी अपार ज्ञान को देखकर वे पुकार करते हैं—"हा अणाहा कहं हुंत, जइ ण हुंतो जिणागमो?"

"सचमुच! ऐसे जिनागम के शरण के बिना मैं सर्वथा अनाथ ही रहता और इससे मद-अज्ञान में फसकर इस भयंकर भवाटवी में मारा-मारा फिर कर बेमौत मरता!" धन्य है जिनागम ने मुझे बचा लिया।

□ □ □

आशा औरन की क्या कीजे !

मानव केशरी स्व आचार्य श्री विनय
जयदेव सूरीश्वरजी महाराजश्री के
शिष्य रत्न महामहोपाध्याय
श्री यतीन्द्र विजयजी महाराज
(व्या , न्याय, काव्य, तीर्थ साहित्य शास्त्री)
हिम्मत नगर

☐ दिवाकर की दिव्यता, शशि की शीतलता, आदर्श की निर्मलता एव सागर की गम्भीरता का द्योतक परमतारक परमेष्ठियों से अलकृत पावनतम मुक्ति मन्दिर मे विराजमान होने का सौभाग्य प्राप्त कराता है।

सत् चित आनन्दघन स्वरूपी शुद्ध चैतन्य-धर्मी प्राणी के आसपास अनादिकालीन कर्म-जन्य वासना द्वारा दु ख, दारिद्रय एव दौर्भाग्य के जाल का फैलाव बढ चुका है।

परपदार्थ की परिणति के आवरण से निर्मल ज्ञान प्रभा की दिव्य ज्योति का प्रकाश मद बन गया है।

अनन्तानन्त ज्ञान दर्शन चारित्र एव वीर्य चतुरम्य रूप भावप्राणो का स्वामी निरजन निराकार परम पावन परमात्मा के स्वरूप से समानधर्मी आत्मा समग्र ससार का सम्राट् होने के बावजूद विनाशी देह अस्थायी सम्पदा चचल यौवन एव क्षणभगुर जीवन के प्रति आसक्ति धारण कर आशादासी के बधनो मे आबद्ध बन गया।

छोटे से रोटी के टुकडे के लिए द्वार-द्वार भटकने वाले श्वान के समान मोहासक्त प्राणी ने स्वय के आगे पीछे अनेक दु खों की परम्परा का सृजन किया।

शराब के नशे मे चकचूर बनकर शहर का प्रतिष्ठित मान्यता प्राप्त श्रीमत वस्त्राभूषणो से सजधज होने के बावजूद नगर की गन्दी नाली के छोर पर पडा, धूल मे लोट रहा है। शेरी के श्वान उनके मुख मे पेशाब कर रहे है। फिर करुणता इस बात की है कि वह स्वय बेभानदशा मे अमृतपान के आस्वाद की अनुभूति कर रहा है।

सहृदय व्यक्ति यदि यह दृश्य को देखता है तो दिल मे करुणा का प्रवाह प्रवाहित होवे यह स्वाभाविक है। आशा के मृगजल के पीछे दौड लगाने वाला चेतन भी मोह, ममता की मदिरापान से सान-भान गवाकर घोरतम दु खो की आग मे जलता है तब सत-महर्षियो के अन्तर मे करुणा की मदाकिनी (गगा) अवश्य प्रगट होती है। उनका प्रवाह से समग्र जीवराशि को पावन करने का शुभ भाव जागृत होता है। यही नियमानुसार महायोगी राज श्री आनन्दघनजी महाराज ने अन्तर की लीन से "आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे" ऐसी मनमोहक सुरावली के मधुर स्वरलहरी का आन्दोलन जगाया।

इन आन्दोलनों से जागृत प्राणी सावधान बन जाता है। "पर की आशा सदा निराशा यह है जगजन पाशा, ते काटन करो अभ्यासा लहो सदा सुखवासा।" के स्वर्णिय सन्देश सुनता हुआ भीतर के अनुपम अन्तर वैभव के दर्शन की दिव्यदृष्टि प्राप्त करता है।

संसार के अनेक संघर्षों की जननी, आधि व्याधि एवं उपाधि के त्रिविध ताप की जन्म-दात्री, ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की त्रिवेणी के निर्मल प्रवाह को मलिन बनाने वाली आशा दासी से सम्बन्ध विच्छेद करता है। उच्चतम आदर्श जीवन की साधना मे संबंध स्थापित करता है।

दिवाकर की दिव्यता, शशि की शीतलता, आदर्श (दर्पण) की निर्मलता एवं सागर की गंभीरता का द्योतक परम-तारक परमेष्ठियों से अलंकृत पावनतम मुक्ति मन्दिर में बिराजमान होने का सौभाग्य प्राप्त कराता है।

पर्वाधिराज श्री पर्युषणा महापर्व के पावनकारी दिवसों में उच्च तप आराधना एवं साधना से प्रत्येक भावुक प्राणी वैसा सौभाग्य प्राप्त करे यही शुभकामना के साथ सत् साहित्य के प्रकाशन शृंखला की स्वर्णिय कड़ी में नाम जोड़ने वाली मणिभद्र पत्रिका के सत्प्रयत्न की प्रशंसा करता हूँ एवं दिन दुगनी रात चौगुनी प्रगति की शुभेच्छा समेत विराम।

□ □ □

धर्म :

धर्म साधना से पुण्यानु-बन्धी पुण्य एवं आत्म-शुद्धि की वृद्धि हो यही उद्देश्य है। अतः धर्म साधना स्वरूप सुकृत करते रहना चाहिये ताकि बाद में उनकी बार-बार अनुमोदना से पुण्य पुष्टि और आत्म-शुद्धि बढ़ती चले।

दान :

दान देने से धन घटता नहीं है। कुए में से कितना ही पानी निकालो तो भी उसकी जगह नया पानी आता है। इसी प्रकार सम्पत्ति का सदुपयोग करने से वह पुनः प्राप्त होती है। धर्म की शुरुआत दान से होती है। सारा संसार दान से चलता है। सूर्य प्रकाश का दान करता है, चन्द्रमा शीतलता का दान करता है। पानी, अग्नि, वायु [illegible] दान करते है।

पर्युषण पर्व और हमारा कर्तव्य

गणि अरुण विजयजी महाराज
(न्याय दर्शनाचार्य)

☐ विश्व भर में कौन सर्वथा निष्पाप और शुद्ध है ? शायद करोडों में से दो-पांच को भी चुनना मुश्किल है। पाप-पाप ही है। हिंसा, झूठ, चोरी आदि सैंकडों किस्म के पाप है ? अत पाप शुद्धि हेतु पर्युषण की उपासना अवश्य करनी ही चाहिये।

"कर्तव्य हमारा धर्म है।" धर्म कर्तव्य परायणता मे है। धर्म से मेरा भला है या मेरे से धर्म का भला है ? यह प्रश्न यदि हम अपने आपको पूछें तो अन्तरात्मा क्या जवाब देगी ? धर्म से तो हमारा भला ही है, निश्चित ही है, मेरे द्वारा धर्म का भी भला कभी तो होना ही चाहिए। जिस नौका मे हम समुद्र पार उतरते हैं कभी उस नौका की मरम्मत भी करनी पडती है, देखभाल करनी पडती है। ठीक वैसे ही धर्म तो हमारा कल्याण सदा ही करता है तो कभी हमे भी धर्म का रक्षण करना चाहिये। यह रक्षण कैसे होगा ! धम की उपासना करते रहने से ही धर्म का रक्षण होता है।

"धर्म है तो हम हैं या हम है तो धम है ?" यह एक और प्रश्न सोचने जैसा है। इसका उत्तर ढुंढते समय मान-अभिमान न आ जाये इसकी पूरी सावधानी रखनी पडेगी। धर्म है तो हम हैं इस पक्ष को सभी स्वीकारेंगे। और सही भी है। धम किया है तो आज हम भी इस स्थिति तक पहुँच सके हैं। लेकिन दूसरा पक्ष सोचते समय यह ध्यान रखें कि हम धर्म को करते आ रहे हैं अत धम भी सुरक्षित है। व्यक्ति जब अपनी स्वार्थ वृत्तियो को धर्म क्षेत्र मे लाकर उलेचता है तब सही वास्तविक धर्म का स्वरूप भी विकृत हो जाता है। अत सही अर्थ मे धर्म करने पर धम का स्वरुप यथावत् रहेगा। धर्म को भावी पीढी के लिए टिकाना है और वह भी यथार्थ शुद्ध स्वरूप मे टिकाना है। इसके लिए तो फिर करते ही रहना यही एकमात्र विकल्प है।

धर्म सदा काल करना है। न कि केवल पर्व दिनो मे ही। नही पर्व दिनो मे विशेष रूप से करना चाहिये लेकिन सामान्य दिनो मे भी करना तो चाहिये ही। उदाहरणार्थ प्रतिदिन खाते हुए भी हम पुत्र की शादी मे सविशेष आनन्दोत्साह के साथ खाते हैं। हम प्रतिदिन कपडे पहनते ही हैं लेकिन पुत्र की शादी आदि प्रसग विशेष पर विशेष प्रकार के नये कपडे पहनते हैं भोगसुखो को प्राप्त करके उन्हें ही भोगने मे जब आसक्त - - --

• शेष पृष्ठ ५९ पर

☐ पांच प्रकार के आचारों-ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चरित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन प्रधान पञ्चाचारों का यथोचित स्वयं पालन करना और दूसरों से कराना यह आचार्य का नैतिक दायित्व है। इन आचारों के पालन और प्रचार के लिये इन्द्रियों का निग्रह, कषायों का जय, ब्रह्मचर्य की गुप्ति का पालन, पंच समिति और तीन गुप्ति रूपी अष्टप्रवचन-माता का सेवन आचार्य के लिये अवश्य विहित हैं।

श्री नवकार महामन्त्र के पाँच पदों का महत्त्व

• पंन्यास श्री जिनोत्तम विजयजी गणिवर्य

(1) **अरिहन्त पद**—जो इन्द्रियों के विषयों, कषायों, परिषहों और वेदनाओं का विनाश करने वाले हों वे अरिहन्त-अर्हत् कहलाते हैं। जो सब जीवों के शत्रुभूत उत्तर प्रकृतियों से युक्त आठ कर्मों का नाश करने वाले हों, वे अरिहन्त कहलाते हैं तथा जो वन्दन, नमस्कार, पूजा और सत्कार के योग्य हों, मोक्षगमन के लायक हों, सुरासुरनरवासव से पूजित हों और अभ्यन्तर शत्रुओं का विनाश करने वाले हों वे अरिहन्त कहलाते हैं।

पू. श्रीमद् जिनभद्रगणि क्षमाश्रमणजी महाराज ने भी 'विशेषावश्यक भाष्य' में कहा है कि राग, द्वेष और चारों कषायों, पांचों इन्द्रियों तथा परिषहों को झुकाने वाले अरिहन्त कहलाते हैं। पू. कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्र सूरीश्वर जी महाराज ने 'योगशास्त्र' में कहा है कि—"जो सर्वज्ञ हैं, जिन्होंने राग-आदि दोषों को जीता है, जो त्रैलोक्यपूजित हैं और जो जैसे हैं, उनका वैसा ही यथार्थ विवेचन करते हैं, वे अर्हन् परमेश्वर कहलाते हैं।

विश्व में चार पदार्थ मंगल रूप हैं, उनमें अरिहन्त भगवानों का भी स्थान है—

"अरिहन्त मंगल"

लोक के उत्तम चार पदार्थों में भी अरिहन्त भगवानों का स्थान है—

"अरिहन्ता लोगुत्तमा"

चार शरणभूत में अरिहन्त भगवानों का स्थान है—

"अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि"

अरिहन्त परमात्मा के अनेक नाम हैं, जिनका प्रतिपादक श्लोक निम्नलिखित है—

"अर्हन् जिनः पारगतस्त्रिकालवित्,
क्षीणाष्टकर्मा परमेष्ठ्यधीश्वरः।
शम्भुः स्वयम्भूर्भगवान् जगत्प्रभु-,
स्तीर्थंकरस्तीर्थकरो जिनेश्वरः॥
स्याद्वाद भयदसार्वाः सर्वज्ञः सर्वदर्शिकेवलिनौ।
देवाधिदेवबोधिद-पुरुषोत्तम-वीतरागाप्ताः॥"

इस तरह अरिहंतों के आठ प्रातिहार्य और चार मूल अतिशय [illegible]

को आश्चर्य मे डालते हैं, चौतीस अतिशय भी मन्त्र मुग्ध करते हैं और उनकी पैंतीस गुणयुक्त वाणी सर्व-ग्राह्य धमदेशना माल-कौसिकी मुख्य राग मे सबको आत्मोद्धार का सच्चा मार्ग बताती है।

अरिहन्तों के बारह गुणो का दिग्दर्शन

1 अशोकवृक्ष, 2 सुरपुष्पवृष्टि 3 दिव्य-ध्वनि, 4 चामर, 5 सिंहासन, 6 भामण्डल, 7 दुन्दुभि, 8 छत्र।

इनके अतिरिक्त चार अतिशय होते हैं—

1 अपायापगमातिशय, 2 ज्ञानातिशय, 3 पूजातिशय और 4 वचनातिशय।

इस तरह उपर्युक्त आठ प्रातिहार्य तथा चार मुख्य अतिशय मिलकर श्री अरिहन्त परमात्मा के बारह गुण होते हैं।

अरिहन्त भगवान के 34 अतिशयो के सबध मे पूर्वाचार्यो ने कहा है कि जन्म के चार अतिशय, कर्म क्षय से उत्पन्न हुए ग्यारह अतिशय और देव कृत उन्नीस अतिशय होते है। यथा—

चउरो जम्मप्प भिई,
इक्कारस कम्मसखए जाए।
नवदस य देवजणिये,
चउत्तीस अइसए व दे॥

कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्रसूरीश्वरजी महाराज ने भी इन चौतीस अतिशयो का निर्देश अपने श्री अभिधान चिन्तामणि कोश' मे किया है।

श्री अरिहन्त परमात्मा की विशिष्ट गुणमयता

1 प्रशस्त राग एव अप्रशस्त राग पर विजय प्राप्त करने के कारण वे 'राग-विजेता' हैं।

2 प्रशस्त द्वेष एव अप्रशस्त द्वेष पर विजय प्राप्त करने के कारण वे 'द्वेष-विजेता' हैं।

3 स्पर्शेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, नेत्रेन्द्रिय, और श्रवणेन्द्रिय पर विजय प्राप्त करने के कारण वे 'इन्द्रिय-विजेता' है।

4 क्षुधा-तृषा आदि बाईस परीषहो पर विजय प्राप्त करने के कारण वे 'परिषह-विजेता' हैं।

5 देवो, मनुष्यो और तिर्यचो द्वारा किये गये उपसर्गों के समय भी मेरु-पर्वत की तरह अटल रहे, अत 'उपसर्ग-विजेता' हैं।

6 इहलोक आदि सात भयो पर विजय प्राप्त करने के कारण वे 'भय-विजेता' है।

श्री अरिहन्त पद का प्रथम स्थान क्यो ?

समस्त पदो का जन्म-स्थान श्री अरिहन्त पद ही है। अरिहन्त परमात्मा से सिद्ध भगवान विशेष हैं। इतना ही नही, इनकी शक्ति और पूजनीयता भी अधिक है। इतना होने पर भी जनपद पर उपकार की दृष्टि से अरिहन्त परमात्मा का स्थान ऊँचा है। सिद्ध भगवान की पहचान कराने वाले भी अरिहन्त परमात्मा ही हैं। इस कारण ही उन्हे प्रथम स्थान पर स्थापित किया गया है।

1 अरिहन्त पद की भावना—अरिहन्त भगवान तीन लोक के नाथ हैं, विश्व-वन्द्य और विश्व-विभु हे, विश्व का कल्याण करने वाले हैं, देव-देवेन्द्रो से पूजित हैं, भयकर भव-अटवी से पार लगाकर मुक्ति मे पहुँचाने के लिये महा सार्थवाह हैं, अहिंसा के परम प्रचारक, पुरुषोत्तम एव लोकोत्तम है। अभय-

दाता, सुमार्ग बताने वाले, शरण देने वाले और बोधि बीज का लाभ कराने वाले हैं, धर्मदेशना का श्रवण कराने वाले, धर्म रूपी रथ को चलाने वाले श्रेष्ठ सारथी, लोकालोक प्रकाशक-केवलज्ञान एवं केवल-दर्शन के धारक हैं; स्वयं जिन बने हैं और अन्य को जिन बनाने वाले हैं, सर्वज्ञ तथा सर्वदर्शी हैं; वीतराग देवाधिदेव और तीर्थंकर हैं। मोक्ष-नगर में जाकर सादि अनन्त स्थिति में रहने वाले और शाश्वत अनन्त सुख को प्राप्त कराने वाले हैं।

2. **सिद्ध पद**—अनादि काल से आत्मा के साथ लगे हुए समस्त कर्मों से रहित होकर सर्वथा कृतकृत्य और सिद्धरूप बने हुए, सिद्ध आत्माओं के रहने के स्थान को 'सिद्धपद' कहा जाता है।

श्री सिद्ध पद में प्रतिष्ठित आत्मा की अवगाहना, चरमावस्था में जो अवगाहना होती है, उससे तीसरे भाग न्यून होती है, अर्थात् त्याग करते हुए देह में जिस प्रकार आत्मा रही है उससे ⅓ न्यून अर्थात् ⅔ भाग अवगाहना से मोक्ष में शाश्वत रूप में लोकाग्र को स्पर्श करके सर्वदा रहती है।

आत्म-सम्बद्ध अष्ट कर्म के क्षय से उत्पन्न हुए अनन्त ज्ञान आदि आठ गुणों के स्वामी कहलाते हैं तथा अष्ट कर्मों के उत्तर भेदों के सर्वथा क्षय की अपेक्षा से वे सिद्ध भगवान इकत्तीस गुणों के स्वामी भी कहलाते हैं। सिद्ध भगवान का स्वरूप अद्भुत एवं अगोचर है। श्री सिद्ध भगवान के सुख का एक अंश भी आकाश में न समा सके इतना भी सिद्ध भगवान को सुख है।

अनन्त गुणों के धारक श्री सिद्ध भगवान अनन्त, अनुत्तर, अनुपम, शाश्वत और सदा स्थायी आनन्द देने वाले मोक्ष के शाश्वत सुख के भोक्ता है तथा मोक्ष-मार्ग में प्रयाण करने की उत्तम प्रेरणा देने वाले महान् उपकारी हैं। ऐसे श्री सिद्ध भगवान अवश्य-मेव आराधनीय हैं।

जिन्होंने अनादिकालीन संसार के भ्रमण-मूलक निखिल कर्मों का सर्वथा सर्वनाश कर दिया है, जो मोक्ष में पहुँच गये हैं, अब जिन्हें पुनर्जन्म लेने का और पुनः मोक्ष में जाने का प्रयोजन नहीं रहा है, उन्हें ही 'सिद्ध' कहा जाता है। सिद्ध का अर्थ है परिपूर्ण, जो संसार के समस्त सुखों और दुःखों से, विभाव-दशा एवं परपरिणति से तथा राग-द्वेष आदि रिपुओं से मुक्त होकर स्वभाव दशा और स्व परिणति को प्राप्त होते हैं वे सिद्ध, बुद्ध, निरंजन, निराकार एवं ज्योति-स्वरूप कहलाते हैं।

सिद्ध भगवान के आठ गुण :

श्री सिद्ध भगवान ज्ञानावरणीय आदि चार घनघाती एवं चार अघनघाती कर्मों का सर्वथा क्षय करके सम्पूर्ण रूपेण आठ गुणों से समलंकृत सिद्धात्मा-मुक्तात्मा हैं। इनके आठ गुण इस प्रकार हैं—

नाणं च दंसणं चिय, अव्वाबाहं तहेव सम्मत्तं।
अक्खय ठिइ अरूवी, अगुरुलहुवीरियं हवइ॥

1. अनन्तज्ञान, 2. अनन्तदर्शन, 3. अव्याबाध सुख, 4. अनन्त चारित्र, 5. अक्षयस्थिति, 6 अरूपित्व, 7. अगुरुलघु और ८ अनन्त वीर्य, ये आठ गुण सिद्ध भगवानों के हैं।

1. **अनन्त ज्ञान**— ज्ञानावरणीय कर्म का सर्वथा क्षय होने पर आत्मा को यह अनन्त ज्ञान अर्थात् केवलज्ञान गुण प्राप्त होता है।

इसे अप्रतिपाती (सर्वदा रहने वाला) ज्ञान भी कहा जाता है।

2 अनन्तदर्शन—दर्शनावरणीय कर्म का सर्वथा क्षय होने पर आत्मा को यह अनन्त दर्शन अर्थात् केवलदर्शन गुण प्राप्त होता है।

3 अव्याबाध सुख—वेदनीय कर्म का सर्वथा क्षय होने पर आत्मा को यह सुख प्राप्त होता है।

4 अनन्त चारित्र—मोहनीय कर्म का क्षय होने पर आत्मा को यह गुण प्राप्त होता है। इसमे क्षायिक सम्यक्त्व और यथाख्यात चारित्र का समावेश होता है।

5 अक्षय स्थिति—आयुष्य कर्म का क्षय होने पर आत्मा का विनाश न हो ऐसी यह अनन्त स्थिति (अक्षय स्थिति) प्राप्त होती है। सिद्धात्माओ का जन्म-मरण नही होने से वे सदा स्वस्थिति मे ही रहते है। सिद्ध स्थिति मे ही रहते हैं। सिद्ध स्थिति की आदि तो है, किन्तु अन्त नही है। इसे सादि अनन्त स्थिति कहते हैं।

6 अरूपित्व—नाम कर्म का क्षय होने पर आत्मा को यह गुण प्राप्त होता है। श्री सिद्ध भगवान के शरीर नही होने से वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श नही होता, जिससे अरूपित्व प्राप्त होता है।

7 अगुरुलघुत्व—गोत्र कर्म का क्षय होने पर आत्मा यह गुण प्राप्त करती है, जिससे आत्मा मे न गुरुत्व रहता है और न लघुत्व तथा ऊँच-नीच का व्यवहार भी नही रहता।

8 अनन्त वीर्य—अन्तराय कर्म का क्षय होने पर आत्मा को अनन्त दान, अनन्त लाभ, अनन्त भोग, अनन्त उपभोग तथा अनन्त वीर्य गुण प्राप्त होता है। समस्त लोक को अलोक करना हो अथवा अलोक को लोक करना हो, ऐसी शक्ति स्वाभाविक रूप से सिद्ध परमात्मा मे विद्यमान होने पर भी उन्होंने कभी अपने वीर्य शक्ति का उपयोग नही किया और न करेंगे, क्योकि पुद्गल के साथ होने वाली प्रवृत्ति इनका धर्म नही है।

इस प्रकार सिद्ध भगवान आठो गुणो से युक्त हैं।

सिद्ध भगवतो के नाम—सिद्ध, बुद्ध, पारगत, परम्परागत, कर्मकवचोन्मुक्त, अजर, अमर और असङ्ग—वे इनके नाम हैं।

सिद्धों के भेद—इनके पन्द्रह भेद हैं। 'नवतत्त्व प्रकरण' मे बताया है कि—

जिण अजिण तित्थिऽतित्था,
गिहि अन सलिंग थी नर नपुंसा।
पत्तेय सयबुद्धा,
बुद्धबोहिय इक्क-णिक्का य॥

1 जिनसिद्ध, 2 अजिनसिद्ध, 3 तीर्थ सिद्ध, 4 अतीर्थसिद्ध, 5 गृहस्थलिंगसिद्ध, 6 अन्य लिंगसिद्ध, 7 स्वलिंगसिद्ध, 8 स्त्री-लिंगसिद्ध, 9 पुरुषलिंगसिद्ध, 10 नपुसक-लिंगसिद्ध, 11 प्रत्येकबुद्धसिद्ध, 12 स्वयबुद्ध-सिद्ध, 13 बुद्धबोधितसिद्ध, 14 एक सिद्ध, और 15 अनेक सिद्ध।

श्री सिद्ध भगवानो को प्रथमत नमस्कार क्यों नहीं ?

नमस्कार मन्त्र मे सिद्ध भगवानो का नमस्कार रूप मे द्वितीय स्थान है क्योकि अरिहन्त ही तो हमे श्री सिद्ध भगवानो की स्थिति आदि के सम्बन्ध मे समझाते है।

3 श्री आचार्य पद—श्री नमस्कार महा-मन्त्र मे आचार्य पद का तीसरा स्थान है।

श्री अरिहन्त और सिद्ध भगवान दोनों के पद देव तत्त्व में है। तत्पश्चात् गुरु तत्त्व में सर्वप्रथम आचार्य का स्थान है।

अन्तिम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहुस्वामी ने 'आवश्यक सूत्र' की 'निर्युक्ति' में आचार्य के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है कि—

पंचविहं आयारं,
आयरमाणा तहा पमाया संता।
आयारं दंसंता,
आयरिया तेण वुच्चंति ॥

पांच प्रकार के आचारों का स्वयं पालन करने वाले, प्रयत्नपूर्वक अन्य के समक्ष उनको प्रकाशित करने वाले तथा साधुओं का उन पांच प्रकार के आचारों-ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चरित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन प्रधान पञ्चाकारों का यथोचित स्वयं पालन करना और दूसरों से कराना यह आचार्य का नैतिक दायित्व है। इन आचारों के पालन और प्रचारों के लिये इन्द्रियों का निग्रह, कषायों का जय, ब्रह्मचर्य की गुप्ति का पालन, पंच समिति और तीन गुप्ति रूपी अष्टप्रवचनमाता का सेवन आचार्य के लिये अवश्य विहित है।

आचार्य भगवन् पूर्ण ध्यान रखकर शिष्यों को पुनः-पुनः उनके आचारों का स्मरण कराते हैं, स्खलना को सुधारते हैं, भूलों को रोकते हैं, प्रेरणा देकर आचार में जोड़ते हैं। इतना ही नहीं, आवश्यकता पड़ने पर कटु वचन कह कर भी शिष्यों को आचार में स्थिर करते हैं। आगम-शास्त्र में कहे हुए उत्सर्ग और अपवाद के रहस्य को पूर्णतः ध्यान में रखते हैं।

आचार्य महाराज स्वयं आत्म-साधना में संलग्न रहकर दूसरों को उपदेश देकर आत्म-साधना में संलग्न करते हैं। श्री संघ की उन्नति के मार्ग प्रदर्शित करते हैं और विचलित साधकों को साधना की उपादेयता समझाकर पुनः संयम आदि धर्म-मार्ग में प्रवृत्त करते हैं।

ऐसे शासन की अनुपम प्रभावना करने वाले, शासन के आधार-स्तम्भ आचार्य महाराज को 'गच्छाचार पयन्ना' में तीर्थंकर के समान कहा गया है।

"तित्थयर समो सूरि, सम्मं जो जिणमयं पयासेइ"

ऐसे भावाचार्य जीवों के अधिक हित-साधक हैं। इनके पास अनेक शक्तियों, लब्धियों और सिद्धियों का विशेष बल होता है। धर्म-साम्राज्य के स्वामी आचार्य महाराज के चरणों में देवगण एवं चक्रवर्ती आदि सम्राट् भी अपना सिर झुका कर हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं।

आचार्य के छत्तीस गुण—'पंचिदिय सूत्र' में आचार्य के गुण बताये गये हैं। सारांश यह है कि—

5—स्पर्शनेन्द्रिय आदि पांच इन्द्रियों का संवरण।
9—वसति आदि नौ प्रकार की ब्रह्मचर्य की गुप्ति (वाड़) का संरक्षण।
4—क्रोध आदि चार कषायों से मुक्त।
5—प्राणातिपातविरमण आदि पांच महाव्रतों से युक्त।
5—ज्ञानाचार आदि पांच आचारों से युक्त।
5—ईर्यासमिति आदि पांच समितियों से युक्त।
3—मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियों से युक्त।

36

जो गच्छ के भार को वहन करने मे वृषभ के समान हैं तथा इन्द्रिय रूपी अश्वो को ज्ञान रूपी डोर से ग्रहण करके वश मे करने वाले हैं। ऐसे अनेक गुणो से समलकृत आचार्य भगवान सर्वदा वन्दनीय हैं।

4 श्री उपाध्याय पद—गुरु तत्त्व मे तथा परमेष्ठियो मे चतुर्थ श्री उपाध्याय महाराज मुनिवृन्द को आगम-सिद्धान्त का दान करने वाले हैं। श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी ने आवश्यक निर्युक्ति मे कहा है कि—

वारसगो जिरणक्खाओ,
सज्झाओ कहियो बुहेहिं।
त उवइ सन्ति जम्हा,
उवज्झाया तेरण वुच्चति ॥

श्री अरिहत तीर्थंकर परमात्मा के द्वारा प्ररूपित वारह अगो को पण्डित पुरुष स्वाध्याय कहते हैं। उनका उपदेश करने वाले उपाध्याय कहलाते हैं।

श्री श्रमण सघ मे आचाय भगवान के पश्चात् उपाध्यायजी महाराज का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आचार्य भगवान की अनुपस्थिति मे शासन का भार उन्ही पर रहता है। ये शिष्यो को सूत्रार्थ के ज्ञाता बनाकर सर्वजन-पूजनीय बना देते हैं। अत ये पूजनीय तथा वन्दनीय है।

अनेक उपमाओ से समलकृत—श्री उपाध्यायजी महाराज अनेक उपमाओ से समलकृत हैं—

1 गारुडी के समान—ये मोहरूपी सर्प के दश से ज्ञान रूपी चेतना से हीन जीवो मे चेतना प्रकट कर सकते हैं। अत इन्हे विष-वैद्य गारुडी के समान माना है।

2 धन्वन्तरी वैद्य के समान—ये अज्ञान रूपी व्याधि से पीडित प्राणियो को श्रुतज्ञान रूपी रसायन-औषधि के द्वारा सच्चे ज्ञानी बनाकर वास्तविक आरोग्य का आस्वादन कराते हैं।

3 ज्ञान-अकुश देने वाले—मन रूपी मदोन्मत्त हाथी आत्मा के गुण रूपी वन को छिन्न-भिन्न कर देता है, उसे वश मे रखने के लिये केवलज्ञान रूपी अकुश ही समर्थ है। श्रुतज्ञान अकुश रखने वाले ये ही हैं।

4 नेत्र खोलने वाले—उपाध्यायजी अद्भुत ज्ञान का दान करते हैं। ज्ञान के अतिरिक्त कोई भी वस्तु दीर्घकाल तक जीव के पास नही रहती। उनका दिया गया ज्ञान रूपी धन कदापि घटता नही, बढता ही रहता है। उपाध्यायजी महाराज ज्ञान रूपी नेत्र खोल देते हैं।

5 पाप रूपी ताप का शमन करने वाले—विश्व के पाप रूपी ताप से तप्त होकर उद्वेग पाये हुए जीव उपाध्यायजी की शरण मे आकर पाप का ताप शान्त करके उपशम रस के अनुपम आस्वाद का अनुभव करने वाले हो जाते हैं। अत वे महादानी उपाध्यायजी सदैव वन्दनीय हैं।

6 युवराज के समान तथा आचार्य पद के योग—उपाध्यायजी महाराज जैन शासन मे युवराज के समान हैं। ये भविष्य मे आचार्य बनते हैं। उपाध्यायजी के सान्निध्य मे शिष्य-गण सयम मे स्थिर होकर उद्विग्नता को तिलाजलि देते हैं।

सतत अध्ययन-अध्यापन मे तत्पर,

स्व-पर के हित की साधना में उद्यत; हाथी-अश्व-वृषभ-सिंह-वासुदेव-नरदेव, इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, भण्डारी (कुबेर), जंबूवृक्ष, सीतानदी, मेरु-पर्वत, स्वयंभूरमण समुद्र, सिन्धु, रत्न तथा भूप—इन सोलह उपमाओं से युक्त ऐसे उपाध्यायजी महाराज कल्याण-कामी आत्माओं के लिये अहर्निश आराध्य हैं।

उपाध्याय के पच्चीस गुण—श्री आचारांग सूत्र आदि ग्यारह अङ्ग, श्री औपपातिक सूत्र आदि बारह उपाङ्ग, चरणसित्तरी तथा करणसित्तरी इन पच्चीस गुणों के धारक होते हैं।

5. **श्री साधु पद (मुनिपद)**—मोक्षमार्ग के साधक साधु कहलाते हैं। ये सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र रूपी रत्नत्रयी के द्वारा मोक्षमार्ग की आराधना में लीन रहते हैं; आर्त्त और रौद्र रूप दुर्ध्यान का त्याग करके धर्म एवं शुक्लध्यान को स्वीकार करते हैं; रत्नत्रयी का पालन करने के लिये अहर्निश मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति से युक्त रहते हैं; मायाशल्य, निदानशल्य और मिथ्यादर्शनशल्य तीन शल्यों से रहित होते हैं; रसगारव, ऋद्धिगारव और शातागारव इन तीनों गारवों से विमुक्त रहते हैं।

उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य रूपी त्रिपदी का अनुसरण करते हैं; राजकथा, स्त्रीकथा, भक्तकथा तथा देशकथा इन चारों विकथाओं को नहीं करते; चार कषायों को जीतते हैं, पाँचों इन्द्रियों को वश में रखते हैं; षट्काय जीवों की रक्षा करते हैं; हास्य, रति, अरति, भय, शोक और जुगुप्सा (दुर्गंछा) इन छः नोकषायों से दूर रहते हैं; पांच महाव्रतों और रात्रि-भोजन विरमण व्रत के धारक होते हैं तथा सात प्रकार के भयों से रहित होते हैं।

साधु जातिमद, कुलमद, रूपमद, बलमद, लाभमद, श्रुतमद, तपमद और ऐश्वर्यमद इन आठ प्रकार के मदों से परे रहते हैं। ये दस प्रकार के यति धर्म का पालन करते हैं। इस प्रकार मोक्ष साधना की सामग्री के द्वारा साधु उत्तम आत्म-साधना करते हैं।

संसार के समस्त प्रपंचों को छोड़कर पाप-जन्य समस्त प्रवृत्तियों का त्याग करके पाँच महाव्रतों तथा रात्रि भोजन व्रत की पालना की भीष्म प्रतिज्ञा करके, किसी का अनिष्ट नही चाहने वाले; समभाव साधना में सलग्न तथा आदर्श जीवन व्यतीत करके जिन्होंने आत्मा के अन्तर शत्रुओं का विनाश करने का दृढ़ निश्चय किया है ऐसे वन्दनीय, प्रशंसनीय साधुता के धारक अनगार-मुनिराज को श्रमण, निर्ग्रन्थ, साधु एवं भिक्षु आदि नामों से पहचाना जाता है।

साधु 42 दोषों को टालकर 27 गुणों से समलंकृत होते हैं, अतः साधुपद सत्ताईस प्रकार से आराध्य है।

प्राणातिपातविरमण आदि से युक्त छः व्रत; पृथ्वीकाय आदि छः जीवकाय की रक्षा, पांच इन्द्रियों का निग्रह; लोभ-त्याग-क्षमा भावविशुद्धि; प्रतिलेखना आदि करण-विशुद्धि संयमयोग का सेवन; मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति क्षुधा आदि बाईस परीषहों की सहनशीलता अर्थात् मृत्युपर्यन्त सहिष्णुता—ये साधु के सत्ताईस गुण कहे जाते हैं। इनको प्राप्त करने के लिये सत्ताईस प्रकार से साधुपद की आराधना

होती है ।

संयम-साधना मे सहायक बनने के योग से साधुओ को भी पूज्य माना है । शास्त्रो मे साधु-श्रमणों को अनेक उपमाओ से समलकृत किया गया है—अहिंसा-सिन्धु, त्रिभुवन-बन्धु, उत्तम वृषभ, षट्पद भ्रमर, कुक्षि-सवल, अगधन कुल के सर्प (वमन किये गये भोगो को कभी नही चाहते), मेरुपर्वत, शूरवीर, विशाल वट-वृक्ष, उत्तम नाव के समान, उत्तम माता-पिता के समान, मेलसमैन हैं । अत ये वन्दनीय, पूजनीय तथा आदरणीय हैं ।

O

श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला की स्थायी मितियां

1-4-89 से 31-3-90 तक

501 00 श्री एच के शाह, बम्बई
501 00 श्रीमती उच्छवकँवर महनोत
501 00 श्री प्रतापसिंह जी सुनीलकुमार जी लोढा
501 00 श्रीमती अचलकँवर सुराना (धमपत्नी पन्नालाल जी सुराना)
501 00 श्री केवलचद जी माणकचद जी
501 00 श्री शिखरचद जी ढढ्ढा
501 00 स्व श्री प्रेमचद जी कोचर
501 00 श्री सजयकुमार जी लोढा
501 00 श्री शिखरचद जी पालावत
501 00 श्री सिद्धराज जी ढढ्ढा
151 00 श्री मधुर टैक्सटाइल्स
151 00 श्री राजकुमार जी कुमारपाल जी दूगड
151.00 श्री प्रकाशचद जी मेहता
151 00 श्री इन्दरचद जी गोपीचद जी चौरडिया
151 00 श्री कन्हैयालाल जी जैन
151 00 श्री मदनराज जी कमलराज जी सिंघवी
151 00 श्री सौभाग्यचन्द्र जी बाफना
151 00 श्री सुशीलचन्द्र जी सिंघी
151 00 श्री सोनराज जी पोरवाल
151 00 श्री हीराचद जी चौरडिया
151 00 श्रीमती मनोहरकँवर जैन

अहिंसा क्यों ? और कितनी ?

• मुनिराज श्री भुवन सुन्दर विजयजी म० सा०
कोयम्बतूर

☐ आज विश्व मे हिंसा का कैसा घोर ताण्डव नृत्य चला है ? मुलायम रेशम जैसा चमड़ा प्राप्त करने के लिये पशुओ की भयंकर हृदय-द्रावक कत्ल होती हैं या जिन्दे पशु पर उबलता पानी डालकर उसे डण्डे से पीटा जाता हैं।

'जैसी करनी वैसी भरनी' 'जैसा करो वैसा पाओ' इस सूत्र के अनुसार अन्य को सुखशाता का दान करने से सुखशाता प्राप्त होती है और अन्य को अशाता का दान करने से अशाता प्राप्त होती है। दुष्कृत में यह स्पष्ट हिसाब है, मात्र फल-प्राप्ति में कुछ विलम्ब सम्भव है। इतना ही कहते हैं न कि—'भगवान तेरे राज्य में अंधेर नहीं, देर-विलम्ब है।' अर्थात् भगवान ! तुम्हारे धर्म शासन ने यह फरमाया है कि—कर्मसत्ता के वहाँ अँधेरा नहीं है किन्तु विलम्ब है। किया हुआ सुकृत या दुष्कृत निष्फल नही जाता है, किन्तु उसका देरी से फल मिलता है, क्योंकि उस सुकृत या दुष्कृत से बंधे हुए कर्म पकने पर अपना परिणाम दिखाते हैं। फोड़ा हुआ वह तुरन्त पीड़ा नहीं देता है किन्तु पकने पर वेदना, दर्द करता है।

इस हिसाब से दूसरे जीवों की हिंसा की, इसमें इनको पीड़ा-त्रास देने में बंधे हुए पाप-कर्म के विपाक में हमें अवश्य पीड़ा भोगनी ही है। यह पीड़ा [illegible] से 10 गुनी मिलती है, ऐसा शास्त्र वचन है। यदि हिंसा करने पर भी दुःख नही मिलता होता तो फिर जगत् में इतने सारे जीव दुःख में क्यों सड़ते हैं ? हमें अगर दुःख नहीं चाहिए तो फिर कौनसी समझदारी पर जीवों की हिंसा कर उन्हें दुःख पहुँचाते हैं ? अथवा अन्य व्यक्ति ने भयंकर जीव हिंसा कर कोई चीज-वस्तु बनाई, उसे शौक से क्यों खरीदकर उपयोग में लेते है ?

आज विश्व में हिंसा का कैसा घोर ताण्डव नृत्य चला है ? मुलायम रेशम जैसा चमड़ा प्राप्त करने के लिए पशुओं की भयंकर हृदयद्रावक कत्ल होती है। जिन्दे पशु पर उबलता पानी डालकर उसे डण्डे से पीटा जाता है, जिससे खून चमड़ी में भर जाता है, बाद में उसे जिन्दे-जिन्दे ही शरीर पर से छील लिया जाता है जिससे मुलायम चमड़ा [illegible]

जीवों की चमड़ी नोच ली जाती है? ऐसे चमड़े से बने जूते, चप्पल, पाकिट, गद्दी आदि का कितना प्रचुर मात्रा में उपयोग होता है? जीवन में अहिंसा को स्थान कहाँ रहा?

इसी प्रकार आज दवाई, टॉनिक पाउडर प्रवाही तथा खाद्य सामग्री आदि में भी प्राणिज तत्त्व कितने घुस गए हैं? विटामिन्स, लीवर एक्सट्रेक्ट, इसेन्स ऑफ चिकन्स, चेचक आदि के इन्जेक्शन, मिल्क पाउडर इत्यादि में शक्ति हेतु अंडे का रस, अस्पताल में दूध में या अन्य रीति से दिया जाता है। अंडे का रस इत्यादि कितना-कितना चल पड़ा है? आज मत्स्य उद्योग विकसता जा रहा है, अत अब अनाज के आटे में भी सूखी मच्छी के आटे की मिलावट होना आसान बन गया है। जीवन में हिंसा कितनी बढ़ गयी है अगर इन हिंसक वस्तुओं का हम उपयोग करते हैं।

वैसा ही आज कपड़े के निर्माण में और अन्य भी कई मौज-शौक एव सौंदर्य-साधन की वस्तु के निर्माण में प्रचुर मात्रा में हिंसा का आश्रय लिया जाता है। फिर, आज की इलेक्ट्रिसिटी, रेल्वे और बड़े कारखाने कितनी-कितनी हिंसामय आरम्भ-समारम्भ से चलते हैं? फिर भी मानव को चलते-फिरते बात-बात में ऐसी विशेष आवश्यकता बिना भी टेलीफोन, रेडियो, पिकनिक-पार्टी प्रवास आदि कितनी ही वस्तुओं का उपभोग करने की आदत बन गई है? और वह उपभोग भी इसके पीछे हुई अपार हिंसा का विचार किए बिना बड़ी मौज से? तब सोचिए जीवन में अहिंसा का स्थान कितना?

'क्या दूसरे जीवों को जीने का अधिकार ही नहीं है? और हमें ही जीने का अधिकार है? अपने स्वार्थ की खातिर, अपनी तुच्छ सुविधा के लिए आज कितनी-कितनी प्रत्यक्ष या परोक्ष हिंसा में और हिंसक साधनों के उपयोग में हम नि सकोच मदमस्त रहते हैं? इसकी कोई समझभी परेशानी भी नहीं? सर्वतोहितकर धर्मशासन की कोई जिम्मेदारी-भारबोझ अपने सिर पर नहीं? क्या भयकर जमानावाद के प्रवाह में ही बहजाना? ये सब विचारने योग्य हैं।

हिंसा में पड़ने वाले का स्वय तो हृदय निष्ठुर–निर्दय–निर्लज्ज बनना ही है और भविष्यत्कालीन कारमी अशाता–पीडा–वेदना को आमत्रण दिया जाता है, साथ-साथ सामने वाले जीव की दृष्टि से भी यह भयकर है। वह इस रीति से कि जिस त्रस जीव की हत्या हिंसा होती है, उसे मौत के वक्त सक्लिष्ट परिणाम बनता है, उसकी आत्मा तीव्र कषाय के भावों में गिरती है, मोहमूढ बनती है। इसका परिणाम यह भी एक आता है कि वह जीव मर कर शायद एकेन्द्रियपन में चला जाए! इसका कैसा पतन? क्योंकि उस एकेन्द्रियपन में और वहाँ की दीर्घकाय स्थिति में फिर-फिर से जन्म-मरण होता रहता है। एकेन्द्रियपन में बार-बार जन्मता है और मरता है। ऐसी स्थिति में उत्कृष्ट से शायद असख्य या अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी जितना सुदीर्घकाल भी पसार करना पड़ता है। अर्थात् हो सकता है कि जीव यदि वैसी कायस्थिति में फँस गया तो बेचारे को कितने ही दीर्घातिदीर्घकाल तक अनत-अनत दु ख में यातना-त्रास भुगतना पड़ेगा? और मोक्ष से कितना काल दूर हो जाएगा?

मान लो कि इस प्रकार हिंसा से सक्लेश में मरने के बजाय अगर कोमल परिणाम से

मरा होता तो सम्भव है जल्दी ऊँचे चढ़ जाता....यावत जल्दी मोक्ष प्राप्ति की स्थिति में आजाता । किन्तु इसकी हिंसा करने वाले ने इसे संक्लेश में डालकर एकेन्द्रियपन में उतार दिया और सम्भवत: शायद असंख्य-अनन्त करोड़-करोड़ सागरोपम काल तक लगातार एकेन्द्रियपन की जन्म-मरण की कैद में डाल दिया । हिंसा से मरते हुए इस जीव का कितना दु:खद नतीजा ?

अर्थात् हिंसा इसलिए पालने योग्य है, जिससे हिंसा के उक्त अनर्थों से बचा जा सकता है । इसमें यह बात खास ध्यान में रखने योग्य है कि—एकेन्द्रियपन में से मुश्किल से जैसे-तैसे करके त्रसपन में, दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिपन तक में आया हुआ जीव बेचारा मेरी हिंसक प्रवृत्ति से मरकर फिर से असंख्य अनंतकाल की एकेन्द्रियपन की कैद में बन्द न हो जाए ।

इस जागृति को रखने के लिए (१) गमना गमनादि प्रवृत्ति में अत्यन्त सावधानी (२) तुच्छ शौक का त्याग (३) मामूली तुच्छ प्रयोजन के खानपान और घूमने फिरने पर अंकुश (४) सचित्त-द्रव्य-विगई आदि प्रतिदिन के १४ नियम और अन्य व्रत नियम (५) महाआरम्भमय व्यापार का त्याग (६) विकथा कुथली का त्याग (७) नित्य जिनवाणी श्रवण (८) श्रावक के आचार तथा महापुरुषों के ग्रन्थों का पठन....जैसे उपाय करने योग्य हैं ।

□ □ □

पुण्य :

द्रव्य संग्रह करना जरूरी नहीं है । जहां तक पुण्य का उदय है तब तक लक्ष्मी रहने वाली है । पुण्य का उदय पूरा होने पर लक्ष्मी विदा ही होने वाली है । अत: जितना बने उतना द्रव्य शुभ कार्यो में खर्च करते रहना चाहिये ।

मौन :

मौन रहने में बहुत गुण है । इसमें कलह बन्द होती है, जिह्वा पर काबू आता है और वाचिक पाप बन्द होता है । मौन से श्वासोच्छ्वास कम लिये जाते हैं । मूर्खता प्रगट नहीं होती और मृषावाद बन्द होता है । मौन से संकल्प कम बढ़ता है और वायुकाय जीवों का रक्षण होता है । मौन में इतने गुण होते हैं ।

मत्रों के राजा—मत्राधिराज
यत्रों के राजा—यत्राधिराज
तीर्थों के राजा—तीर्थाधिराज
और
पर्वों के राजा—पर्वाधिराज
श्री पर्युषण महापर्व

आइये ! पर्वाधिराज का स्वागत करें

• मुनिरत्नसेन विजयजी म सा
पिडवाडा (राज)

आज महामगलकारी पर्वाधिराज की आराधना का पहला दिन है। आज से आठ-दिवसीय महापर्व का शुभारम्भ हो रहा है। हर जैन के हृदय मे आनन्द है, उत्साह है, उल्लास है, उमग है।

पर्युषण पर्वों का राजा है।

मत्रो का राजा मत्राधिराज श्री नमस्कार महामत्र है।

यत्रों का राजा यत्राधिराज श्री सिद्धचक्र यत्र है।

तीर्थों का राजा तीर्थाधिराज श्री शत्रुजय महातीर्थ है।

उसी तरह पर्वों का राजा पर्वाधिराज श्री पर्युषण महापर्व है। हम उसका स्वागत करते है।

पर्युषण लोकोत्तर पर्व है।

लौकिक पर्वों का उद्देश्य मौज-शौक एव ऐश-आराम करने का होता है।

लोकोत्तर पर्वो का उद्देश्य आत्मा की शुद्धि करने का होता है।

दिल मे से दुश्मनी की भावना का विसर्जन कर सब जीवो के साथ आत्मीयता का सबध जोडने हेतु इस महापर्व की आराधना करनी है।

इस महापर्व की आराधना द्वारा अनादि काल से आत्मा मे बसी हुई जीव-द्वेष की दुर्वासना को दूर कर जगत् के सर्व जीवो के साथ मित्रता का मधुर रिश्ता जोडना है।

इस महान् पर्व की विशुद्ध और निर्मल आराधना के लिए पूर्वाचार्यो ने पाच महा-कर्तव्य बताये हैं। आठो दिन इन महाकर्तव्यो का अवश्य पालन करना चाहिए—

1 अमारि प्रवर्तन

इस दुनिया के हर जीव को जीना पसद है। मौत किसी को पसद नही। इसलिए किसी भी जीव को पीडा नही होनी चाहिए। हिंसा द्वारा व्यक्ति अन्य जीव के द्रव्य प्राणो का नाश करता है। लेकिन वह यह नही जानता कि किसी और के द्रव्य प्राणो का नाश करने से उसके स्वय के भाव प्राणो का नाश होता है।

पाँच इन्द्रियां, मन, वचन, काया, आयुष्य और श्वासोच्छ्वास—ये दस द्रव्य प्राण हैं।

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य एवं उपयोग—ये आत्मा के भाव प्राण हैं।

जो आत्मा दूसरों के द्रव्य प्राणों का नाश करती है, वह स्वयं के भावप्राणों के विनाश को ही आमंत्रित करती है।

प्रकृति का यह नियम है—'जो आप देंगे, वही आपको मिलेगा।' कई बार तो अनेक गुना होकर वापस मिलता है।

—दूसरों को जीवन दोगे तो जीवन मिलेगा।

—दूसरों को सुख दोगे तो सुख मिलेगा।

—दूसरों को अभय दोगे तो अभय मिलेगा।

हेमचन्द्राचार्यजी भगवंत ने योगशास्त्र में ठीक ही कहा है—"दीर्घ आयुष्य, श्रेष्ठ रूप, आरोग्य, प्रशंसा आदि अहिंसा के ही फल हैं, इसलिये हिंसा का परित्याग करना चाहिए।

सौंदर्य प्रसाधन और फैशन के नाम पर आज ऐसी कई चीजें देखने को मिलती हैं कि जिनके पीछे निरपराधी पंचेन्द्रिय जीवों की क्रूर हिंसा छिपी होती है। आज-कल व्यापक रूप से प्रयुक्त होने वाले ऐसे सौंदर्य प्रसाधनों के लिये की जाने वाली निर्दोष एवं मूक पशुओं की निष्ठुर हिंसा के क्रूरतापूर्ण तौर-तरीकों को जानकर दिल दहल उठता है।

धर्मीजनो !

अत्यन्त दुर्लभता से यह उत्तम मनुष्य जीवन आपको मिला है। और उसमें भी सर्वोत्कृष्ट करुणा के स्वामी जिनेश्वर भगवंत का शासन प्राप्त हुआ है .... कि जिस शासन की विशुद्ध आराधना के द्वारा आत्मा अल्प भवों में ही भवबंधन से मुक्त हो जाती है।

सावधान रहना .... कहीं यह उत्तम मानव जीवन क्षणिक मौज-शौक के साधनों के पीछे व्यर्थ न चला जाय। यदि संभव हो तो कृत्रिम सौंदर्य बढ़ाने वाले इन प्रसाधनों का सदा-सर्वदा के लिए त्याग कर देना।

अन्य सारे पापों का त्याग और धर्म का सेवन भी अहिंसा को पुष्ट करने के लिए ही है। जिन-जिन पापाचरणों द्वारा किसी जीव को पीड़ा या खेद होता हो उन पापों का अवश्य त्याग करना चाहिए।

याद कीजिए राजा मेघरथ को एक कबूतर की जीवन-रक्षा के लिए जिन्होंने अपनी जान कुर्बान कर दी।

याद कीजिए गुर्जर सम्राट कुमारपाल को एक मकोड़े के प्राण बचाने हेतु जिन्होंने अपने पैर की चमड़ी कटवा दी थी।

याद कीजिए अणगार धर्मरुचि को? छोटे-छोटे जीवों की रक्षा हेतु कड़वे और विपाक्त तुम्बे का साग खुद खाकर मौत को गले लगाया था।

ऐसे तो कई प्रसंग इतिहास के पन्नों पर सुवर्णाक्षरों से अंकित हैं।

2. साधर्मिक वात्सल्य :

अपने समान जिनधर्मी को साधर्मिक कहते हैं। जो व्यक्ति जैन धर्म के प्रति श्रद्धावान है—श्रद्धा से परिपूर्ण है ...... वह साधर्मिक है। साधर्मिक के प्रति हृदय में प्रेम और वात्सल्य भरा होना चाहिए।

शास्त्रों में कहा है कि -

तराजू के एक पलड़े में सब धर्म हों और दूसरे पलड़े में केवल साधर्मिक वात्सल्य हो,

तो भी दोनो पलडे समान ही रहेगे । न एक नीचे जायेगा, न दूसरा ऊपर ।

ससार के अन्य सवध तो अनेक वार प्राप्त होते हैं, परन्तु साधर्मिक का सवध तो हमे वडी दुर्लभता से प्राप्त हुआ है, इसीलिए साधर्मिक को देखकर मन आनन्द से भर जाना चाहिए यथाशक्ति उनकी अवश्य भक्ति करनी चाहिए ।

साधर्मिक कोई अनुकम्पा का पात्र नही है, वह तो भक्ति का पात्र है । इसलिए साधर्मिक के प्रति मन मे आदर और भक्ति-भाव विकसित करना चाहिए । उपेक्षा भाव तो कदापि नही आना चाहिए । जैसे पुत्र को देखकर मा के हृदय मे वात्सल्य का सागर छलक उठता है, वैसे ही साधर्मिक को देखकर हमारे हृदय मे वात्सल्य छलकना चाहिए ।

यदि कोई साधर्मिक दीन-दु खी हो तो उसके वाह्य दु खो को दूर करने चाहिये । यदि धमहीन हो तो वह धर्म-आराधना अच्छी तरह से कर सके, ऐसी सुविधाएँ एव मार्ग-दर्शन उसे देना चाहिए ।

धर्महीन को धर्म के मार्ग पर वढाना भी एक प्रकार का साधर्मिक वात्सल्य है ।

3 क्षमापना

पर्वाधिराज का तीसरा कर्तव्य है क्षमापना । क्षमापना पाचो कर्तव्यो के मध्य मे है ।

क्षमापना के दोनो ओर दो-दो कतव्य हैं । हमारे जीवन की तीन अवस्थाओ (वाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था) मे से युवावस्था ज्यादा कीमती है । इसी उम्र मे कुछ सृजन किया जा सकता है । सूर्य की भी तीन अवस्थाएँ होती हैं । इन तीनो मे से मध्याह्न मे ही सूर्य की तेजस्विता अपनी चरम सीमा पर होती है ।

इसी तरह पाचो कर्तव्यो के मध्य मे स्थित क्षमापना का भी उतना ही महत्त्व है ।

क्षमा-याचना एव क्षमा-प्रदान जैन शासन के आदर्श हैं ।

क्षमापना ही पर्वाधिराज का प्राण है ।

निष्प्राण देह की कोई कीमत नही ।

विना क्षमापना के आराधना की भी कोई कीमत नही ।

क्षमापना का अर्थ है वैरभाव का विसर्जन और प्रेम एव मित्रता की स्थापना ।

गलती करना, मनुष्य का स्वभाव है । परन्तु दूसरो की गल्तियो को उदार मन से स्वीकार करना दैवत्व है ।

क्रोध का प्रत्यास्त्र है क्षमा । क्रोध है आग और क्षमा है शीतल जल । आग की अपेक्षा पानी की शक्ति ज्यादा है ।

क्षमा के समक्ष क्रोध नही टिक सकता है । क्षमावान, आराधक वनता है, क्रोधी विराधक वनता है ।

"क्रोधे क्रोड पूरवतणु, सयम फल जाय"—क्रोध करने से एक करोड पूर्व तक की हुई सयम-साधना भी निष्फल चली जाती है ।

जिसके हृदय मे वैरभाव की आग प्रज्वलित रहती है, वह आत्मा अध्यात्म/आत्महित के मार्ग पर आगे नही वढ सकती है ।

जहाँ क्रोध उत्पन्न होता है वहाँ साधना स्थगित हो जाती है । अवसर तो वहाँ से विदा हो जाती है ।

क्रोध के विपाक अति भयकर हैं, अत्यन्त कटु हैं ।

क्रोध परिताप पैदा करता है, आपस के

प्रेम का नाश करता है, दूसरों को उद्वेग पहुँचाता है।

क्रोध के कटु विपाकों का विचार कर क्रोध को निष्फल बनाने की दिशा में प्रयत्न-शील रहना चाहिए।

याद कीजिए महामुनि गजसुकुमाल को। श्वसुर ने मस्तक पर जलते हुए अंगारों की पगड़ी पहनाई.......तो भी वे अडिग रहे। श्वसुर पर क्रोध करना तो दूर रहा, अपने कर्मों पर ही क्रोध किया.......और सब कर्मों को जीतकर सम्पूर्ण कर्म-मुक्त बनने में सफल हो गए।

याद कीजिए महात्मा गुणसेन को। सुलगते हुए अंगारों की वर्षा में भी वे शांत-प्रशांत बने रहे। साथ ही सब जीवों के प्रति ....विशेष कर अग्नि शर्मा की आत्मा के प्रति भी उन्होंने क्षमा-भाव धारण किया।

याद कीजिए उन महर्षि अंगर्षि को। अपने ऊपर झूठा आरोप गढ़ने वाले के प्रति भी जिनके मन में लेशमात्र अशुभ-भाव पैदा नहीं हुआ।

याद कीजिए उन महामुनि खंधक को। शरीर की चमड़ी उतारने वाले को भी जिन्होंने "भाई से भी तू भला रे.........." कहकर अद्भुत क्षमा का दर्शन कराया।

याद कीजिए, चंडरुद्राचार्य के उस नूतन शिष्य को। जिन्होंने अपने अद्भुत क्षमामय जीवन के माध्यम से गुरु को भी केवल ज्ञान प्रदान किया।

अब क्रोध के कटु विपाकों की ओर भी थोड़ी सी नजर करें।

क्रोध के परिणाम से तापस अग्निशर्मा हजारों वर्ष के तप का फल गवा बैठा और अनन्त काल के लिए उसने अपना भव भ्रमण बढ़ा लिया।

क्रोधावेश के कारण ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती सातवीं नरक का अतिथि बन गया।

क्रोध के तीव्र आवेग के कारण राजगृही का द्रमक भी सातवीं नर्क में पहुँच गया।

क्रोध इस लोक में भी दुश्मनी पैदा करता है और परलोक में भी दुर्गति की परम्परा को बढ़ाता है।

इसलिये क्रोध और क्षमा के परिणामों का विचार करके हे पुण्यात्माओं। आप अपने हृदय में से दुश्मनी का जहर दूर कर देना तथा हृदय को मित्रता के अमृत से छलका देना, प्रेमरस में भिगो देना।

4. अट्ठम तप :

पर्वाधिराज का चौथा कर्तव्य है अट्ठम तप।

अट्ठम का अर्थ है एक साथ तीन उपवास।

उपवास अर्थात् आत्मा के समीप वास करना।

तप धर्म की आराधना का मतलब है आहार की आसक्ति पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील बनना।

आत्मा का मूल स्वभाव अणाहारी है। इस अणाहारी पद की प्राप्ति के लिये तप धर्म की आराधना अति आवश्यक है।

कर्म रूप ईंधन को जलाकर भस्म कर देने के लिए तप अग्नि समान है।

परन्तु हाँ! एक बात अवश्य ध्यान में रखनी है। वह तप सम्यक्त्वसहित होना चाहिए।

सम्यक्त्वशून्य तप की कोई कीमत नहीं।

लक्षमरणा साध्वी ने मायापूर्वक पचास वर्ष तक घोर तपश्चर्या की, लेकिन वे पाप मे से मुक्त न हो सकी। इसका एकमेव कारण "माया शल्य' ही था।

किसी चितक ने ठीक ही कहा है कि तप तो आत्मा का आहार है। तप से शरीर शुद्ध होता है और मन पवित्र बनता है।

मन को निर्विकार बनाने के लिए और इन्द्रियो पर विजय प्राप्त करने के लिए तप एक अमोघ उपाय है।

मुमुक्षु आत्मा को महापर्व के दौरान अट्ठम तप एव अन्य दिवसो मे भी तपधर्म की आराधना अवश्य करनी चाहिए।

5 चैत्य परिपाटी

पर्वाधिराज का पाचवा कर्तव्य है चैत्य परिपाटी। चैत्य यानी जिनालय। महापर्व पर्युषण के दिनो मे अपने नगर मे जितने भी चैत्य हो, उन सबके दर्शन अवश्य करने चाहिये।

चैत्यो मे विराजित परमात्मा के दर्शन करने से दर्शन-शुद्धि होती है। सम्यग्दर्शन की प्राप्ति एव शुद्धि के लिए जिन दर्शन अत्यन्त आवश्यक है।

जिन प्रतिमा परमात्मा के वीतराग-स्वरूप की प्रतीक है। राग एव द्वेष के किसी भी चिह्न से रहित परमात्मा की प्रतिमा के दर्शन करने से मन पवित्र होता है।

परमात्मा की प्रतिमा एक दर्पण है। जिसमे हमे हमारा आत्मस्वरूप दिखाई पडता है।

परमात्मा के दर्शन भी परमात्मा बनने के लिए ही हैं।

इन पाच पवित्र कर्तव्यो का पालन करने से हम आत्म कल्याण के पथ पर आगे बढ सकेंगे।

अनमोल वचन

- नम्रता से देवता भी मानव के वश मे हो जाते हैं।
- चरित्र साथियो मे बैठकर विकसित होता है।
- वे कितने निर्धन हैं जिनके पास धैर्य नही।
- साहस ही सफलता की मजिल है।
- सदा सत्य बोलो।

—विनीत सान्ड

संस्कृति के आद्य-प्रणेता युगादिदेव आदिनाथ भगवान

• मुनिश्री रत्नसेन विजयजी महाराज
पिंडवाड़ा

☐ माघ कृष्णा त्रयोदशी के दिन समस्त अघाति कर्मों का क्षय कर शाश्वत मोक्ष धाम को प्राप्त कर अजरामर पद को प्राप्त करने वाले धर्म संस्कृति के आद्य-प्रणेता आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव प्रभु के चरण कमलों में कोटि कोटि वन्दन हो।

भारत की पवित्र आर्य संस्कृति जो समूचे विश्व के लिए परम आदर्श रूप है। जिस संस्कृति के पवित्र आदर्शों पर चल कर मनुष्य अपने जीवन में परम शांति की अनुभूति कर सकता है—ऐसी पवित्र आर्य संस्कृति के आद्य प्रणेता युगादिदेव आदिनाथ परमात्मा हैं जो जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर हैं।

इस अवसर्पिणी काल में जैन धर्म के 24 तीर्थंकर हुए हैं जिनमें प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान हुए हैं। आदिनाथ को ऋषभदेव एवं केसरियाजी भी कहते हैं।

आदिनाथ प्रभु का जन्म इस अवसर्पिणी काल के तीसरे सुषम-दुषमा नाम के आरे में हुआ था। वह युगलिक काल था। कल्प वृक्षों के माध्यम से लोगों की सारी मनोकामनायें पूर्ण हो जाती थीं। अतः उस समय में समाज में न तो जाति व्यवस्था थी, न कर्म व्यवस्था थी और न ही धर्म व्यवस्था थी। लोग अत्यन्त ही भद्रिक और सरल प्रकृति के थे। उस समय न राज्य व्यवस्था थी और न दण्ड व्यवस्था थी।

परन्तु समय ने पलटा खाया। लोगों की भावनाएँ बदलने लगीं। प्रेम, वात्सल्य और मैत्री के स्थान पर यदा कदा ईर्ष्या और घृणा की बू आने लगी। परस्पर भाईचारे के स्थान पर कभी-कभी संघर्ष का भी वातावरण बनने लगा। इस प्रकार की अव्यवस्था को देख कर कुछ युगलिक ऋषभदेव कुमार के पास आए और बोले, "कहीं कुछ झगड़ा हो जाता है तो उसके न्याय आदि के लिए क्या करना चाहिए?"

ऋषभकुमार ने कहा, "न्याय नीति का उल्लंघन करने वाले को राजा दण्ड देता है अतः आप राजा को सिंहासन पर बिठाकर उसका अभिषेक कीजिए।" इस प्रकार करने से चतुरंगी सेना वाले उस राजा की आज्ञा का कोई भी व्यक्ति उल्लंघन नहीं कर सकेगा।

युगलिकों ने कहा, "आप ही बलवान और शक्तिशाली हैं अतः आप ही हमारे राजा बनें।"

ऋषभकुमार ने कहा— आप नाभिकुलकर के पास जाइये, वे आपको सही मार्गदर्शन देंगे।"

पर्याय मे विचरे। प्रतिदिन दो प्रहर तक धर्म देशना देकर जगत् के जीवो के भाव दारिद्र्य को दूर किया।

त्याग तप और तितिक्षा की सहायता से ही आत्मा कर्म बन्धनो का त्याग कर अजरामर पद को प्राप्त कर सकती है।

परमात्मा की धर्म देशना आज भी इस धरती पर गूज रही है और भूले भटके राहगीर को सन्मार्ग दर्शन करा रही है।

माघ कृष्णा त्रयोदशी के दिन समस्त अघाति कर्मो का क्षय कर शास्वत मोक्ष धाम को प्राप्त कर अजरामर पद को प्राप्त करने वाले धर्म सस्कृति के आद्य-प्रणेता आद्य-तीर्थंकर ऋषभदेव प्रभु के चरण कमलो मे कोटि कोटि वन्दन हो।

□ □ □

"बाग लगाओ"

लगा सको तो बाग लगाओ, आग लगाना मत सीखो।
जगा सको तो प्रीत जगाओ, पीर जगाना मत सीखो।
जला सको तो दीप जलाओ, हृदय जलाना मत सीखो।
घटा सको तो रोष घटाओ, तोष घटाना मत सीखो।
लुटा सको तो कोष लुटाओ, दोष लुटाना मत सीखो।
बता सको तो पथ बतलाओ, कुपथ बताना मत सीखो।
बिछा सको तो फूल बिछाओ, शूल बिछाना मत सीखो।
पिला सको तो अमिय पिलाओ, जहर पिलाना मत सीखो।
सुना सको तो गीत सुनाओ, रुदन सुनाना मत सीखो।
बचा सको तो जान बचाओ, जान को लेना मत सीखो।

□ विनीत साण्ड

□ जिनकी 10वीं पुण्य तिथि—वै. सु. 14, दिनांक 8 मई, 1990 के शुभ दिन जयपुर नगर में धूम-धाम से मनाई गई।

अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य

• मुनि श्री रत्नसेन विजयजी महाराज साहब

आत्म तत्त्व के ज्ञाता गुरुवर: योग मार्ग के प्रेरक थे,
महामंत्र के ध्याता गुरुवर: मैत्री भाव से वासित थे,
युग दृष्टा भद्रंकर गुरुवर: आत्म गुणों के साधक थे,
भक्ति भाव से आप चरण में, कोटि-कोटि वंदन हो।

आजानुबाहु, विशाल भाल, तेजस्वी नेत्र युगल, गौरवर्ण, मुख-मंडल पर ब्रह्मचर्य का अपूर्व तेज तथा प्रशांत मुख-मुद्रा आदि-आदि बाह्य व्यक्तित्व से सुसमृद्ध (होने के साथ ही) अध्यात्म योगी पूज्य पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य श्री का अभ्यंतर व्यक्तित्व भी (उतना ही) विराट् और गम्भीर था। आपका जन्म गुजरात की प्राचीन राजधानी और प्रसिद्ध धर्म नगरी पाटण में वि. सं. 1959 मगसर सुदी 3 (दिनांक 3-12-1903) के शुभ दिन हालाभाई की धर्मपत्नी चुन्नी बाई की कुक्षि से हुआ था। उनका नाम रखा गया—भगवान दास। सचमुच, वे अपने गृहस्थ जीवन में भगवान् के दास बनकर ही जीए और उसी के फलस्वरूप वे "भद्रंकर" (कल्याण करने वाले) बन सके थे।

बाल्यकाल से ही उनका जीवन अत्यंत ही पवित्र और सुसंस्कारी था। भगवद् भक्ति एवं सद्गुरुओं के समागम से बचपन में ही उनकी अन्तरात्मा में वैराग्य का बीजारोपण हो चुका था। कुछ पारिवारिक जटिल बन्धनों के कारण उन्हें गृह-जीवन स्वीकार करना पड़ा था, परन्तु उनका अन्तर्मन तो आत्म-साधना के उद्यापन के लिये ही लालायित था।

वि. सं. 1987 कार्तिक वदी 3 के शुभ दिन मोह माया के सांसारिक बन्धनों का परित्याग कर 28 वर्ष की भरी युवावस्था में दीक्षित बनकर उन्होंने अपना जीवन पूज्य पंन्यास प्रवर श्री रामचन्द्र विजय जी गणिवर्य श्री (बाद में पूज्य आचार्य देव श्रीमद् विजय रामचन्द्र सूरीश्वरजी म. सा.) के पवित्र चरणों में समर्पित कर दिया। वे भगवानदास से मुनि भद्रंकर विजयजी बने।

[illegible]

उनकी आत्म साधना का मगल शुभारम्भ हो चुका था, जो दिन दुनी और रात चौगुनी उत्तरोत्तर बढती ही गई ।

कीर्ति एव बाह्य-प्रसिद्धि के व्यामोह से वे एकदम परे थे ।

जिन-भक्ति (वीतराग-उपासना) एवम् जीव-मैत्री को केन्द्र मे रखकर वे अपनी आत्म साधना मे क्रमश आगे बढते ही गये । भगवद् भक्ति के प्रति उनके दिल मे अटूट आस्था थी । जगत् के समस्त जीवो के प्रति उनके हृदय मे अपूर्व मैत्री भाव था । धनी-निर्धन, शिक्षित-अनपढ, वृद्ध-बाल, परिचित-अपरिचित तथा स्व-पर के प्रति उनके हृदय मे किसी भी प्रकार की भेद रेखा नही थी ।

उनका चिन्तन था— 'जिन-भक्ति" और जीव मैत्री जो (दोनो) एक ही सिक्के के दो पहलू हैं एक के भी अभाव मे दूसरे का अस्तित्व सम्भव नही है । जहाँ सच्ची जिन-भक्ति होगी वहाँ जीव-मैत्री भी रहेगी ही और जहाँ सच्ची जीव मैत्री होगी, वहाँ "जिन-भक्ति" पैदा हुए विना नही रहेगी ।

मैत्री भावना के ही विस्तार-स्वरूप अन्य तीन भावनाओ को भी उन्होने अपने जीवन मे आत्मसात किया था ।

(1) प्रमोद भावना–गुणवान के प्रति आदर भाव ।

(2) करुणा भावना–दु खी जीवो के प्रति करुणा भावना ।

(3) मध्यस्थ भावना–पापी जीवो के प्रति मध्यस्थ भाव ।

जैन दर्शन मे जीवो के प्रति मैत्री, प्रमोद, करुणा और मध्यस्थ रूपी चार (ही) भावनाएँ बतलाई है । सदुपदेश देने पर भी जो न सुधरे और जिसको हित शिक्षा देना भी "साप को दूध पिलाने के बराबर ही हो" —ऐसे पापी के प्रति भी हृदय मे घृणा या तिरस्कार की भावना न कर, उसके प्रति भी मध्यस्थ भाव ही धारण करना चाहिए ।

मैत्री, प्रमोद, करुणा और मध्यस्थ भावना से उनका हृदय ओत-प्रोत था—इसी कारण किसी भी आत्मा के प्रति उनके हृदय मे ईर्ष्या, द्वेष, घृणा या तिरस्कार की भावना नही थी ।

पवित्र गगा के समागम से दूषित जल भी पवित्र बन जाता है, इसी प्रकार पुण्य पुरुष के समागम से अनेक पापात्माएँ भी पावन बन गई थी ।

अस्वाद व्रत अर्थात् आयबिल के तप के प्रति उनके हृदय मे अपूर्व प्रेम था । पाँच इन्द्रियो मे सबसे अधिक बलवान रसनेन्द्रिय ही है । जिसने इस इन्द्रिय को जीत लिया, वह अन्य इन्द्रियो का भी विजेता बन सकता था । वे इन्द्रिय-विजेता महापुरुष थे ।

जैन धर्म के महामत्र "नवकार-मन्त्र" के ऊपर उन्होने अद्भुत चिन्तन किया था और उसी के फलस्वरूप "नमस्कार महामन्त्र" पर अद्भुत शोधपूर्ण साहित्य रचा था ।

उनकी ध्यान एव योग मे अपूर्व रुचि थी । इस सन्दर्भ मे प्राचीन-अर्वाचीन साहित्य का अध्ययन एव परिशीलन कर ध्यान साधना मे वे खूब-खूब आगे बढे थे ।

देह विनाशी है, आत्मा अविनाशी है । इस शाश्वत सत्य को उन्होने अपनी साधना की अनुभूति के स्तर पर परखा था और इसी कारण भयकर से भयकर शारीरिक

रुग्णावस्था में भी वे प्रसन्न चित्त और अनुद्विग्न रह सके थे।

जीवन के कुछ अन्तिम वर्षों में उनकी शारीरिक चिकित्सा के लिये आने वाले डॉक्टर भी उनकी अपूर्व सहनशीलता और आत्म मस्ती को देखकर प्रभावित हो जाते थे। और इसी कारण जहाँ एक ओर डॉक्टर उनकी शारीरिक चिकित्सा करते वहीं दूसरी ओर वे उन डॉक्टरों की आत्म चिकित्सा कर देते।

पद और प्रतिष्ठा की लिप्सा उनके अन्तर्मन को छू न सकी। वे एकदम निःस्पृही साधक योगी पुरुष थे।

वे अधिकांश समय मौन रहते, परन्तु जब भी बोलते शब्दों को तोल-तोल कर बोलते। नपे तुले शब्दो में उनके मुखारविन्द से निकली वाणी श्रोताओ के दिल को छू लेती। एक प्रसिद्ध वक्ता हजारों शब्दों से भी श्रोताओं के दिल में जो परिवर्तन नहीं ला सकता....वे अपने थोड़े से शब्दों से ही श्रोताओं के दिल को झकझोर देते अर्थात् उनके परिमित शब्दों में भी अपरिमित शक्ति निहित थी।

आज से दस वर्ष पूर्व वैशाख सुदी 14, वि. सं. 2037 के दिन अपनी जन्म भूमि पाटण मे ही पाक्षिक प्रतिक्रमण की पावन क्रिया को करते हुए अत्यंत ही समाधिपूर्वक उन्होंने अपने नश्वर भौतिक देह का परित्याग किया था। उनकी भौतिक देह आज विद्यमान नही है, परन्तु उनकी गुणपूत आत्मा तो आज भी विद्यमान है और आगे भी विद्यमान रहेगी जो भक्तात्माओं को (आज भी) जीवन की सही दिशा दिखलाती रहेगी।

वंदन हो अध्यात्म योगी परम गुरु के,
पतित-पावन चरण कमलों में।

□□□

धर्म के प्रकार

दान, शील, तप और भाव ये चार धर्म के मुख्य प्रकार हैं। इन चारों में भी भाव धर्म उत्तम है। परन्तु शुभ क्रिया के पालन के बिना सच्चा भाव प्रगट हो नहीं सकता। दान धर्म का आचरण जहाँ परिग्रह संज्ञा को कम करने के लिये होता है, और शील धर्म का पालन मैथुनादि विषय संज्ञा ऊपर काबू प्राप्त करने के लिये होता है। तप धर्म का आचरण आहार संज्ञा ऊपर विजय प्राप्त करने और अणाहारी पद की प्राप्ति के लिये है।

नैतिक उत्थान और हमारा दायित्व

▫ साध्वी सयम ज्योति श्रीजी
महाराज, जयपुर
M A (Philosophy)

☐ यदि सम्पूर्ण विश्व को विनाश लीला से बचाना है तो विश्व की महान् शक्तियो के नेताओं का यह प्राथमिक मानवीय कर्तव्य हो जाता है कि वे अहिंसात्मक तरीको को अपनाकर नैतिकता एव मानव-सम्पत्ति के सरक्षण, सुरक्षा व शाति मे योगदान दें।

नैतिकता, सामाजिक सरचना का अनादि-काल से आधार रहा है। इसके अभाव मे समाज टिक नही सकता, शनै-शनै समाज का स्वरूप छिन्न-भिन्न हो जायेगा। इसीलिये हमारे पूर्वाचार्यो ने प्राज्ञमुनियो एव यहाँ तक कि समस्त दार्शनिको ने अपने दर्शन एव ज्ञान-भडार मे नैतिकता को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। भारतीय और पाश्चात्य दोनो ही दर्शनो मे नैतिकता पर विशेष बल दिया गया है।

बर्ट्रेण्ड रसल ने तो अपने सुप्रसिद्ध ग्रथ "Society of Morality" मे कहा है कि—"Society shall flounder if morality separated from it" महान् भारतीय दार्शनिक डॉ० राधाकृष्णन ने भी समाज, धर्म, नैतिकता पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "If morality is divorced from social interaction, there will be a rule of jungle"। महात्मा गाधी ने तो राजनीति और समाज एव नैतिकता के मध्य अटूट, अकाट्य एव अटाल्य सम्बन्धो पर बल दिया है। उनका कहना है कि नीति रूपी बीज को जब तक धर्म रूपी सिंचन नही मिलता तब तक उसमे अकुर नही फूटता। जैसे ही हम नैतिक आधार को त्याग देते हैं, हम धार्मिक नही रहते। उनका यह भी कहना है कि "राजनीति और अर्थ-शास्त्र दोनो का आधार नैतिक होना चाहिये।"

नैतिकता ही राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था का अनादिकाल से नियमन करती आ रही है। राजनीतिक पर्यावरण मे नैतिकता को स्थान नही होने से समाज मे अलगाव, राष्ट्रीय disintegration उत्पन्न हो रहा है। लोगो के सामने केवल दो ही उद्देश्य रह गये हैं, "Power & Pelf"। मनुष्य शक्ति और धन प्राप्ति के पीछे पागल हो रहा है। उसे स्वय का भान नही है। दिन प्रतिदिन उसका पतन होता जा रहा है। मानव पतन इतना अधिक हो गया है कि अब उसका नाश सन्निकट है। मनुष्य, मनुष्य का शत्रु हो गया है। एक देश दूसरे देश को पछाडने मे लगा हुआ है। भाई-भाई का गला काटने मे लगा हुआ है। यह निर्विवाद सत्य है कि अणु-आयुधो के निर्माण से विध्वसक स्थिति सम्पूर्ण विश्व में उत्पन्न हो गयी है।

यदि सम्पूर्ण विश्व को विनाश लीला से बचाना है तो विश्व की महान् शक्तियो अमेरिका, रूस और चीन के नेताओ का यह

प्राथमिक मानवीय कर्तव्य हो जाता है कि वे अहिंसात्मक तरीकों को अपनाकर नैतिकता एवं मानव-सम्पत्ति के संरक्षण, सुरक्षा व शांति में योगदान दें।

नैतिकता हमें "New Socio-programme & reforms" के लिए मदद के साथ दिशा प्रदान करती है। साथ ही नवीन विकट परिस्थितियों में, बदलते हुए सामाजिक परिवेश में, आर्थिक व्यवस्था में मार्गदर्शक का कार्य करती हैं।

नवीन संचार-माध्यमों के विकास में जो परिवर्तन एवं हमारी सामाजिक भावनाओं में जो मूलभूत परिवर्तन हुआ है उसको दिशा दिखाने में नैतिकता से पर्याप्त मदद मिली है क्योंकि "Morality is a universal truth" सार्त्र के शब्दों में—"Our social attitudes have undergone changes due to science & technology, hence our moral values must guide us"—सार्त्र का कहना है कि हमारी सामाजिक मनोवृत्तियों में विज्ञान और तकनीकी के कारण जो मूलभूत परिवर्तन हुए हैं, उससे कई ज्यादा विषमताएँ उत्पन्न हो गयी हैं अतः इन विषमताओं को दूर करने के लिए नैतिकता अनिवार्य है।

नैतिकता व्यक्ति के आन्तरिक गुणों पर निर्भर होती है। साहस, धैर्य, पुरुषत्व आदि से प्रेम सहानुभूति, अहिंसा, क्षमा, धैर्य, त्याग आदि गुण की ओर प्रगति ही नैतिक प्रगति है। ऐसे तो कहना अनुचित होगा कि मनुष्य ने नैतिक प्रगति नहीं की है। कुछ ऐसे भी संकेत मिले हैं जो मनुष्य की नैतिक प्रगति के द्योतक हैं। जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ और अन्तर्राष्ट्रीय समझौते। इन समझौतों और देशों की आपसी संधियों ने नैतिक प्रगति को स्थापित कर दिखाया है। आज विज्ञान ने मनुष्य के ज्ञान को व्यापक ही नहीं किया बल्कि उसको आगे बढ़ने के अवसर भी प्रदान किये हैं। लेकिन जहाँ एक तरफ यातायात और सन्देश वाहन के साधनों से दुनिया की उन्नति और समय की बचत हुई, ऐश आराम की भौतिक सुविधाएँ प्राप्त हुई, वहीं दूसरी तरफ मनुष्य में शोषण की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। अणु-आयुधों ने तो पूरे विश्व को इतना घातक बना रखा है कि "If fourth world war were to take place it will be fought with bones and stones". क्योंकि तृतीय विश्व युद्ध में तो सारे अस्त्र-शस्त्र नष्ट हो जायेंगे फिर चौथे विश्व युद्ध के लिए केवल हड्डियाँ और पत्थर ही शेष रहेंगे। नैतिक मूल्यों से ह्रास का प्रमुख कारण मनुष्य जाति का भौतिक मूल्यों को जीवन में प्राथमिकता देना है।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि मनुष्य की नैतिक प्रगति स्थायी और अधिक आशाजनक नहीं है। फिर भी कुछ न कुछ प्रगति अवश्य हुई है, इस प्रगति से इन्कार नहीं किया जा सकता।

व्यक्ति को राज्य द्वारा जो मौलिक अधिकार दिये जाते हैं, उनके पालन में भी नैतिकता अनिवार्य है। व्यक्ति को दिये गये अधिकारों पर राज्य कोई कुठाराघात नहीं कर सकता है, लेकिन व्यक्ति को उनका दुरुपयोग नहीं करना चाहिये।

समाज के प्रत्येक व्यक्ति का यह अपरिहार्य दायित्व बन जाता है कि हम नैतिक मूल्यों की रक्षा के लिए सदैव जागरूक रहें एवं उनके समर्थन के लिए निष्काम भाव से कार्य करते रहें जिससे समाज को सामाजिक पतन से बचाया जा सके। क्योंकि मनुष्य के कुछ नैतिक दायित्व होते हैं, उनके पालन में ही नैतिक उत्थान सम्भव है जो विज्ञान

प्रकार है —

हम सवका दायित्व है कि हम अपने और दूसरो के जीवन का सम्मान करें। आत्महत्या और हत्या दोनो ही अनैतिक काय हैं। हमे अपने जीवन की रक्षा के साथ दूसरो की रक्षा का भी ध्यान रखना चाहिये जैसाकि भगवान महावीर स्वामी ने उपदेश दिया—Live & let live। महावीर स्वामी ने अहिंसा के महत्त्व का सूक्ष्म दृष्टि से समझाया। इनके अनुसार जीव को प्राणो से अलग करना ही हिंसा नही, अपितु कटु शब्द बोलना भी हिंसा है। अहिंसा का पालन करने के लिए मन, वचन और काया तीनो पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है।

हमे स्वतन्त्रता का अधिकार तो प्राप्त है लेकिन उसके साथ हमारा कतव्य भी जुडा होना चाहिये कि हम किसी को अपने पराधीन न करे अर्थात् स्वय साध्य है। हमे साधन के रूप मे किसी भी व्यक्ति को रखने का अधिकार नही है। हमे दूसरे मनुष्यो को वस्तु समझकर नही बल्कि व्यक्ति ही समझ कर व्यवहार करना चाहिये। मानव को अपनी मानवता को कभी तिलाजलि नही देनी चाहिये। हमे मनुष्य के विशुद्ध आचरण का सम्मान करना चाहिये क्योंकि चरित्र ही व्यक्ति का नैतिक आधार है।

हमे सम्पत्ति रखने का अधिकार है, लेकिन साथ ही यह कतव्य भी जुडा होना चाहिये कि हम सम्पत्ति का दुरुपयोग नही करें। हमे दूसरो की सम्पत्ति छीनने, हडपने या चोरी करने का अधिकार नही है। हमे महावीर द्वारा बताये गये अपरिग्रह व्रत का पालन करना चाहिये। हमे अपनी सम्पत्ति का प्रयोग समाज कल्याण के लिए करना चाहिये क्योकि समाज के कल्याण मे ही हमारा स्वय का कल्याण निहित है।

हमे सामाजिक व्यवस्था का सम्मान करना चाहिये क्योकि व्यक्ति के अधिकारो की रक्षा सामाजिक व्यवस्था पर निर्भर है। अगर सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जायेगी तो व्यक्ति के अधिकार खतरे मे पड जायेंगे। सामाजिक व्यवस्था एक पवित्र सस्था है। हम सवको उसका सम्मान करना चाहिये।

हमे कभी भी निराश नही होना चाहिये। हमे आशावादी होने के साथ निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होना चाहिये क्योकि "Practice makes a man perfect"। हम सवको परिश्रम करना चाहिये क्योकि "Work is Worship"।

धार्मिक प्रचारको का, राजनीतिक नेताओ का, सतो का यह प्रमुख दायित्व बन जाता है कि वे जन-जन मे नवीन सामाजिक चेतना जाग्रत करें। वे अपने परम्परागत रूढियो, तौर-तरीको को छोडकर बदलते सामाजिक परिवेश मे सामाजिक, नैतिक सचार का प्रचार-प्रसार का विशेष प्रयत्न करें अन्यथा समाज मे न केवल नैतिक अराजकता (moral anarchy) उत्पन्न होगी बल्कि राष्ट्र का नाश भी सम्भव है।

यदि समाज और राष्ट्र को बिखराव व छिन्न-भिन्न होने से बचाना है तो अब समय आ गया है कि हम सब एकजुट होकर नैतिक शिक्षा को अपने जीवन का अग बना ले। दूसरो को प्रेरित करें, प्रोत्साहित करें एव सच्ची भावना से समाज का स्वरूप बदल देने मे अपना तन, मन, धन लगा दें। यह केवल एक व्यक्ति या समुदाय का कार्य नही बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के प्रत्येक सदस्य का पावन कर्तव्य बन जाता है कि वह नैतिक मूल्यो की रक्षा के लिए अपना हार्दिक एव सच्चा योगदान दे। ▭

एक चमत्कारिक कथा प्रसंग

श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ प्रभु की महिमा

- पुज्य साध्वी श्री दिव्यप्रभा श्रीजी (पू. माताजी म.) की शिष्या बाल साध्वी मुक्तिरक्षा श्रीजी को हुए चमत्कार का वर्णन उनके मुखारविन्द से।
- (साध्वी श्री मुक्तिरक्षा श्री ने ९½ वर्ष की लघु आयु में दीक्षा ली थी तथा उनकी आयु इस समय १३ वर्ष की है।)

—सम्पादक

वि.सं. २०४६ के पौष मास की यह घटना है। रानी स्टेशन पर उपाश्रय में प्रतिक्रमण की विधि करते समय मैं अचानक अपंग हो गयी। एकदम नीचे गिर पड़ी। दस मिनट बेसुध रही, फिर सुध आयी।

उस समय शरीर लकवे के समान लटक गया। ग्यारह दिन तक यह स्थिति रही।

फालना में कार्यरत डॉ. व्यासजी आये। अन्य चिकित्सकों ने भी देह-परीक्षण किया। सभी ने यह कहा कि बीमारी भयंकर है, शरीर में पानी भर गया है—जलोदर आदि अनेक रोगों से ग्रस्त है शरीर। अस्पताल में भर्ती कराना अत्यन्त आवश्यक है।

चार दिन तक भोजन-पानी बन्द रहा। फालना के राजकीय अस्पताल में भर्ती कराने निर्णय किया गया।

उसी दौरान मुझे अनुभूति हुई कि मैं श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ प्रभु का जाप करूँ जिससे समस्त रोग-शोक नष्ट हो जाएगा।

प्रथम स्वप्न -

एक दिन के रात में मुझे स्वप्न आया कि [illegible]

१. "ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नम.।"

२. "ॐ ह्रीँ श्रीँ धरणेन्द्र पद्मावती पूजिताय श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः।"

प्रसन्न चित्त से मैं यह जाप करती रही। यह स्तुति भी मेरी हृदय-वीणा पर गूंजती रही।

धुनीमां बलतो तमे दयानिधि,
जाने फणि सर्प ने ।
जानी सर्व जनो समक्ष क्षण मा,
आपी महामंत्र ने ।
किधो श्री धरणेन्द्र ने भव धनी,
नारी घणा भव्य ने ।
आपो पार्श्व जिनेन्द्र इन्द्र महिमा,
सेवा नमामि मने ।।

भावार्थ—हे दयानिधि पार्श्व प्रभुजी, [illegible]

भव्यजनो को तारे हैं। मुझे भी हे कृपासागर पार्श्वनाथ प्रभु तारो। मै तो आपकी सेवा मे भवोभव समर्पित हूँ, समर्पित हूँ। मुझे तो केवल आपको सेवा ही इष्ट है।'

दूसरा स्वप्न—

दूसरे सपने मे मुझे आदेश मिला कि अस्पताल मे भर्ती मत होना और मुझे तथा सभी को यह आश्चर्य हुआ कि मेरा आधा शरीर ठीक हो गया। मैंने तो अनन्त करुणा-निधान श्री शखेश्वर पार्श्व प्रभु के चरण-कमलो मे सर्वस्व समर्पित कर दिया।

अखीयन हरखन लागी,
हमारी अखीयन हरखन लागी।
दर्शन देख पार्श्व जिणद को,
भाग्यदशा अब जागी॥
अकल अगोचर और अविनाशी,
जगजन ने करे रागी।
हमारी अखीयन हरखन लागी॥

तीसरा स्वप्न—

श्री शखेश्वर पार्श्व प्रभु की भक्ति की खुमारी मे देह-वेदना विस्मृत हो गयी और मुझे तीसरा सपना आया। इस स्वप्न-दर्शन मे मुझे बताया कि 'तुम प्रातकाल सात बजे स्वस्थ हो जाओगी और नौ बजे वापरोगी।

ठीक ऐसा ही हुआ। मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गयी। परन्तु मुझे यह शका हुई कि यह किसी मायावी भूत-प्रेत के फलस्वरूप हुआ है अथवा शुद्ध भक्ति से।

चौथा स्वप्न—

मुझे चौथा स्वप्न आया। इसमे मैंने अपनी शका के निवारण हेतु निशानी मागी।

इस स्वप्न मे मुझे कहा गया है कि गुरुजी ने जो मूर्ति दी है, उसके लिए बादला, चावल एव वासक्षेप प्रातकाल प्राप्त हो जाएगा, उससे प्रतिमाजी की पूजा-अर्चना करना।

और मुझे आश्चर्य हुआ कि प्रातकाल बादला, चावल व वासक्षेप प्राप्त हो गये। मेरा चित्त प्रसन्न हुआ। मैंने निर्मल भक्ति भाव से प्रतिमाजी की पूजा की। मेरी शका का निवारण हो गया। श्री शखेश्वर पार्श्व प्रभु के प्रति मेरी भक्ति प्रगाढ हो गयी।

श्री शखेश्वर तीर्थ की यात्रा—

फिर मैंने श्री शखेश्वर प्रभु के दर्शन हेतु विहार किया। शमी तीर्थ पर मुझे सर्प-दर्शन हुए और श्री शखेश्वर तीर्थ पर अट्ठम तप और सिद्धचक्र पूजन का आदेश हुआ।

अट्ठम तप एव सिद्धचक्र महापूजन—

अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मैं परम पावन श्री शखेश्वर तीथ पर पहुँची। मैंने अट्ठम तप प्रारम्भ किया। अट्ठम तप के प्रथम दिवस मेरे गुरुजी द्वारा दी गयी मूर्ति से अमीझरण हुआ। दूसरे दिन भी अमीझरण हुआ। फिर तीसरे दिन मुझे वासक्षेप प्राप्त हुआ। उस वासक्षेप से मैंने उस अमीझरित चमत्कारी पार्श्व प्रभु की प्रतिमाजी का पूजन किया। माघ शुक्ला ६ को अट्ठम तप सिद्धचक्र महापूजन सहित उल्लासपूर्वक सम्पूर्ण हुआ।

श्री शखेश्वर पार्श्वनाथ प्रभु के पावन दर्शन-वन्दन व स्मरण से मेरा रोग समूल नष्ट हो गया और मुझे नवीन जीवन मिला। निस्सन्देह श्री शखेश्वर पार्श्वनाथ प्रभु की भक्ति अक्षय सुखदात्री है। श्री शखेश्वर तीर्थ महान् चमत्कारी एव प्रत्यक्ष प्रभावी है।

लाख लाख वार प्रभु पार्श्व ने वधामणां,
अन्तरियुं हर्षे उभराय,
आंगणिये अवसर आनन्द नो ।
मोती नो थाल भरी प्रभु ने वधावजो,
अक्षत लेजो वधाय ।
आंगणिये अवसर आनन्द नो ।।१।।
पुण्य उदय थी प्रभुजी निहाल्या,
दर्शन थी दिलडां सौनां हरखायां,
आनन्द उर मां न माय ।
आंगणिये अवसर आनन्द नो ।।२।।

सम्पादकीय टिप्पणी—

[स्वप्न-विज्ञान की आधुनिक खोज ने यह सिद्ध किया है कि जो स्वप्न बिना किसी पूर्वाग्रह अथवा दबाव से आते हैं, वे सहज होते है। पूज्य साध्वीजी के उपरोक्त स्वप्न सहज और स्वाभाविक हैं। अतः विश्वसनीय हैं।]

• • •

उद्धरण

परलोक की दृष्टि से मुक्ति तथा मुक्ति प्राप्त न हो तब तक नवकार मन्त्र उत्तम देवलोक और उत्तम मनुष्य कुल की प्राप्ति कराता है। इसके परिणाम से अल्प समय में बोधि, समाधि और सिद्धि प्राप्त होती है।

•

चरणकरणानुयोग की दृष्टि से साधु और श्रावक की समाचारी के पालन में मंगल के लिये और विघ्न निवारण के लिये नवकार महामन्त्र का उच्चारण बारम्बार आवश्यक है।

भाई ! अभी तुमने ही तो कहा था कि अब तुम्हारा मुख पूर्ण शुद्ध हो गया है और वही शुद्ध मुख का शुद्ध जल तो मैंने आपके ऊपर डाला है। इसमे बिगडने की क्या आवश्यकता है? इसका मतलब तो यह हुआ कि मेरे मुख की शुद्धि अभी हुई नही, इसीलिए आप मुझ पर चिढ रहे हैं। वह शुद्धिवादी कुछ झेंप सा गया। तकवादी ने कहा—महाशय मेरा मुख न शुद्ध है न अशुद्ध। वह तो जैसा था वैसा ही है और जैसा था वैसा रहेगा। पर गन्दे शब्द बोलने के कारण आपका मुख तो निश्चय ही अपवित्र हो गया है।

जिस व्यक्ति के वाणी का सयम नही, उसकी मुख शुद्धि कभी नही हो सकती। अर्थात् आन्तरिक शुद्धि जब तक नही होगी तब तक वाणी मधुर नही हो सकती और आन्तरिक शुद्धि के अभाव मे बाह्य शुद्धि का कोई महत्त्व नही। इस शरीर को कितना भी स्नान कराया जाये, इस पर चन्दनादि का विलेपन किया जाये किन्तु जब तक मन को शुद्ध विशाल एव उदात्त भावनाओ से पवित्र नही बनाया गया तो उस बाह्य स्नान विलेपनादि का कोई अर्थ नही, कोई उद्देश्य नही। किसी कवि ने कहा है—

"अपवित्र पवित्रो वा, सर्वावस्था गतोऽपि वा
यस्भेरत् परमात्मा, स बाह्याभ्यातर शुचि।"

वैसे ही कबीरदासजी ने मन की शुद्धि पर अपने उद्‌गार प्रकट किये हैं—

"मन ऐसा निर्मल भया, जैसे गगा नीर
पीछे-पीछे हरि फिरत, कह गये दास कबीर।"

कोई व्यक्ति तन से चाहे पवित्र हो या अपवित्र अथवा किसी भी अवस्था मे क्यो न हो, जो व्यक्ति अपने मन मे परमात्मा का स्मरण करता है वह अवश्य ही पवित्र है, क्योंकि जब उसका मन पवित्र हो गया तब बाह्य पवित्रता और अपवित्रता का उसके जीवन पर कोई प्रभाव नही पड सकता अत साधना मे मन की पवित्रता का ही अत्यधिक महत्त्व है, वही मुख्य है।

किन्तु कुछ विचारक कहते हैं कि मन बडा पापी है, दुष्ट है, इसको मार डालो, किन्तु पापी मन को मार डालना मन का उपचार नही, किन्तु जैन दर्शन कहता है—"मन को मारो नही, मन को सुधारो" भ० महावीर प्रभु ने भी कहा है—जैसे रक्त से सना वस्त्र पानी से धोने से उजला हो जाता है वैसे ही विषय कषाय से मलीन आत्मा को (मन को) शुद्ध भावनाओ के निर्मल जल से धोकर उज्ज्वल एव पवित्र बनाओ। साधक को प्रति क्षण अपने मन को शुभ भावनाओ से निर्मल करते रहना चाहिए। यदि उसके प्रति उपेक्षा कर दी गई तो जैसे—निकम्मी तलवार जग खा जाती है, अनुपयोगी वस्त्र पडे-पडे मलीन हो जाता है वैसे ही शुभ भावनाओ से शून्य मन भी पापमय अशुभ भावनाओ से भर जाता है। अत आत्मा को शुद्ध, निमल, उदात्त एव विशाल भावनाओ के जल से सदा प्रक्षालित करते रहना चाहिए। यही आत्म साधक की पवित्र साधना है और उसी के बल पर वह अपने साध्य को अर्थात् मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। निर्मुक्त और निर्द्वन्द्व होकर अजर और अमर पद को प्राप्त कर सकता है।

एक पाश्चात्य कवि ने भी कहा है—

"Heaven and Hell in our Conscious"
"As man thinks in his heart, so is he"

☐ ☐

> • छोटे बालक को जब तक अक्षर का प्रतिबिम्ब नहीं बताया जायेगा, क्या वह वर्णमाला समझ सकेगा ? जैन शासन आज इस प्रथम आधार की ओर पूर्णरूपेण जागरूक हैं और समर्पित हैं ।

विषम काल जिन बिंब, जिनागम भवियण कुं आधारा !

☐ हीराचन्द बैद, जयपुर

अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में पं० वीर विजयजी म० ने अन्तराय कर्म निवारण पूजा की रचना की । इसकी सातवीं पूजा में उपर्युक्त वाक्य ढाल के रूप में प्रस्तुत किये हैं । पू० वीर विजयजी महाराज द्वारा रचित सब ही पूजायें भावना प्रधान व गूढ़ रहस्य से ओतप्रोत है पर इन वाक्यों ने तो स्पष्ट यह दरसा दिया है कि वे कितने दूरदर्शी थे । पू० महामहोपाध्याय श्रीमद् यशो विजयजी म० जिनको ३०० वर्ष हो चुके है के बाद जैन शासन में कुछ रिक्तता सी आने लगी थी । प्रभु पूजा का विरोध भी होने लगा था, तब ज्ञानी वीर विजयजी म० ने भविष्य का दर्शन अपनी ज्ञान दृष्टि से कर लिया था जब ही तो उन्होंने विषम काल को आया जानकर यह वाक्य लिखे थे साथ ही ऐसे काल में हमारा आधार क्या हो इस ओर भी सूचन कर दिया था । श्रमण वर्ग व उपदेशको की संख्या दिन पर दिन कम हो रही थी ऐसे अवसर पर सद्बोध प्राप्त करने के लिये उन्होंने दो ही आधार बनाये थे ।

प्रथम जिनेश्वर भगवंत की प्रतिमा और दूसरा जिन आगम । ये दोनों ही आधार इस विषम काल में हमारी आस्था, श्रद्धा व विवेक को टिकाये रखने में सहायभूत बने ।

जिनेश्वर भगवंत की प्रतिमा और मन्दिर आज हजारों हजार वर्ष बाद भी हमारी सभ्यता, संस्कृति व इतिहास को कायम रखने में सहायक बने है । आज शत्रुंजय, गिरनार, आबू, राणकपुर, तारंगा, कुम्भारिया के तीर्थ स्थल न होते तो हमारे इतिहास का क्या आधार होता । आज भी नये-नये बसने वाले शहरों व उपनगरों में भव्य मन्दिरों का निर्माण हो रहा है जो आज भी हमारे समाज की धार्मिक श्रद्धा के परिचायक हैं । हमें सदैव ही यह दिशाबोध ध्यान में रखना चाहिये कि आज हमें जो सुसंस्कार-सम्पन्नता एवं सुसंस्कृत परिवार मिला है वह हमारे पूर्व जन्म में प्रभु की भक्ति के परिणामस्वरूप ही मिला है और जिन प्रभु की कृपा से यह सब मिला है उसके प्रति कृतज्ञ होना हमारा पुनीत कर्तव्य है । प्रायः प्रतिमा के दर्शन पूजन से हमें यह सब क्रम याद आता है और हम प्रभु के प्रति समर्पित हो जाते है यही हमारे कल्याण का मार्ग है ।

आज प्रभु पूजा को नहीं मानने वाले यह स्वीकारते हैं कि किसी भी चीज का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कोई आधार तो रखना ही पड़ेगा । छोटे बालक को जब तक अक्षर का प्रतिबिम्ब नहीं बताया जायेगा क्या वह वर्णमाला समझ सकेगा ? जैन शासन आज इस प्रथम आधार की ओर पूर्णरूपेण जागरूक है और समर्पित है । प्रभु भक्ति जैन बन्धुओं के रोम-रोम में समाई हुई है ।

दूसरा आधार पू० वीर विजयजी म० ने जिनागम के [illegible] की उपासना है । आज हमारे

समाज इस मामले मे उतना जागरूक नही रह पाया जितना होना चाहिए । (पढम् नाण तवो दया) अहिंसा धर्म जैन शास्त्र की जान है पर जब तक ज्ञान नही होगा तब तक अहिंसा व दया की पहिचान व समझ कैसे आयेगी ? वस्तुत भारत मे अग्रेजी राज्य के आगमन के साथ ही हमारी भारतीय सस्कृति को नष्ट करने की जो चाल अग्रेजो ने चली हम भी उसका शिकार हो गये । धार्मिक व शास्त्रीय ज्ञान धीरे-धीरे ह्रास को प्राप्त होने लगा । जिन परिवारो मे आज भी नई पीढी मे जहाँ धार्मिक ज्ञान का आधार है वहाँ सस्कृति, नैतिकता, चारित्र एव दया-भाव मौजूद हैं ।

हमारे समाज का सबसे प्रथम दायित्व जैन सस्कृति को टिकाये रखना है । हिन्दू काल, बौद्ध काल, मुगल काल मे हमारे शासन पर कितने आक्रमण हुए पर हम टूटे नही उसका एक ही कारण था, धार्मिक ज्ञान परम्परा हमारे परिवारो मे चालू थी । आज धार्मिक ज्ञान नही होने से हम हमारे पूर्वजो के गौरवशाली इतिहास को भूल रहे हैं । भक्षाभक्ष्य का ज्ञान भी लुप्त होता जा रहा है । ज्ञानियो द्वारा रहन-सहन, खान-पीन व जीवन जीने की कला—यो कहें उपयोग धर्म का जो सार हमे दिया गया था धार्मिक ज्ञान के नही होने से वह लुप्त प्राय होता जा रहा है । ऐमी स्थिति मे हमारा जैनत्व कैसे टिक पायेगा यह गम्भीर समस्या है । धार्मिक ज्ञान के प्रसार के प्रति समाज की रुचि तो कम है ही एक ओर भी कारण है योग्य अध्यापको की कमी । क्या हमने इस ओर कभी सोचा है कि योग्य धार्मिक अध्यापक क्यो नही तैयार होते ? आज आर्थिक युग है । सबकी अपनी समस्यायें है ऐसी स्थिति मे जब तक धार्मिक अध्यापक को उचित पारिश्रमिक नही मिलेगा तब तक वह क्यो इस क्षेत्र मे आकर अपने भावी जीवन से खिलवाड करेगा । धार्मिक शिक्षक को हम नाम मात्र का वेतन देना चाहते हैं जबकि व्यवहारिक शिक्षण के दाता शिक्षक को उसमे कई गुणा ज्यादा । हमारी दृष्टि मे धार्मिक शिक्षक का वह सम्मान नही होता जो व्यवहारिक ज्ञान के शिक्षक का होता है । और फिर आप आशा करो कि आपके बालको मे सुसस्कार आवे, धार्मिक बोध आवे ? जब तक धार्मिक अध्यापक को उचित पारिश्रमिक नही मिलेगा, तब तक यह समस्या हल नहीं हो सकेगी और योग्य धार्मिक शिक्षक प्राप्त नही हो सकेंगे ।

दूसरे पढने वाले छोटे बालको को प्रोत्साहन देने के लिये भी प्रयत्न करना अति आवश्यक है । उनमे इस वय मे धार्मिक ज्ञान के महत्त्व को समझने की बुद्धि जागृत नही हुई है उसे जगाने के लिये प्रलोभन भी देना पडेगा । छोटे बच्चो को आकर्षित करने के लिये उन्हें मिठाई, चाकलेट व पारितोषिक की व्यवस्था भी करनी पडेगी ।

आज धार्मिक ज्ञान के अभाव मे हमारा जैनत्व कमजोर पडता जा रहा है । प० वीर विजयजी महाराज के शब्दो मे यदि जैनत्व को टिकाये रखना है तो हमे जिन बिम्ब के साथ जिनागम को भी आधार मानना पडेगा । केवल छोटे बालको के धर्म शिक्षण की बात ही नही । युवको, वृद्धो सब ही मे स्वाध्याय की प्रवृत्ति जागृत करनी पडेगी । तब ही विषम काल मे भी हम महावीर के धम को टिका पायेंगे ।

समाज के कर्णधारो, अगेवानो को दोनो आधारो के लिए पूर्ण प्रयत्न करना पडेगा तब ही जैन शासन का गौरव कायम रह सकेगा । □

परम पावन तीर्थ

शत्रुंजय

•

मनोहरमल लूनावत

> • शत्रुंजय लघुकल्प में भी कहा हैं कि अष्टापद, समेतशिखर जी, पावापुरी, चंपापुरी, गिरनार जी आदि तीर्थों को वंदन करने से जो फल प्राप्त होता हैं उससे सौ गुणा फल शत्रुंजय तीर्थ को वंदन करने से होता हैं। जैन कुल में जन्म लेकर जिसने इस महान् तीर्थ की यात्रा नहीं की उसका जन्म ही निरर्थक हैं।

हमारे देश भारत के गुजरात प्रान्त में पालीताना नगर के देव दुर्लभ पर्वत पर जैन धर्म का प्रसिद्ध तीर्थ शत्रुंजय है जिसे सिद्धाचल भी कहते है। यह शाश्वत तीर्थ समुद्र की सतह से 1800 फीट की ऊँचाई पर है। इसकी महिमा अपरम्पार है जिसका वर्णन करना कठिन है। जैसे मंत्रों में महामंत्र नवकार मंत्र है, पर्वतों में मेरु पर्वत है, ताराओं में चन्द्र है, पर्वों में पर्युषण पर्व है, वृक्षों में कल्पवृक्ष है, सूत्रों में कल्पसूत्र है और व्रतों में ब्रह्मचर्य व्रत है वैसे ही शत्रुंजय तीर्थ तीर्थों का राजा है। शत्रुंजय लघुकल्प में भी कहा है कि अष्टापद, समेतशिखर जी, पावापुरी, चंपापुरी, गिरनार जी आदि तीर्थों को वंदन करने से जो फल प्राप्त होता है उससे सौ गुणा फल शत्रुंजय तीर्थ को वंदन करने से होता है। जैन कुल में जन्म लेकर जिसने इस महान् तीर्थ की यात्रा नहीं की उसका जन्म ही निरर्थक है। इस परम पावन तीर्थ पर वर्तमान चौवीसी के नेमिनाथ प्रभु के अलावा सभी तेईस तीर्थंकर भगवान पधारे थे। इस अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर श्री आदिनाथ भगवान नवाणु पूर्व बार इस तीर्थ पर पधारे थे। श्री अजितनाथ भगवान तथा श्री शान्तिनाथ भगवान ने इस तीर्थ पर चौमासा किया था। यही नही इस तीर्थ पर कई क्रोड मुनिराज मोक्ष गये थे। प्रथम भरत चक्रवर्ती ने यहां पहले मनोहर सुवर्ण मन्दिर स्थापित किया था। इसके बाद इस तीर्थ का अब तक सोलह बार उद्धार हो चुके है। इस तीर्थ के दर्शन, वन्दन एवं स्पर्शमात्र से अपूर्व लाभ होता है। श्री शत्रुंजय तीर्थ पर नौ टूके है। इन टूकों में बड़े-बड़े गगनचुम्बी एवं कलात्मक शिल्पयुक्त विशाल मन्दिर है जिन्हें देखकर शत्रुंजय स्वर्गपुरी सदृश दिखती है। इस तीर्थ पर 100 से अधिक जिनालय, 800 देहरीयां, 12000 पाषाण की प्रतिमायें, 700 धातु की प्रतिमायें और 9000 चरण पादुकायें विराजमान हैं।

इस तीर्थ पर चौमासे के चार महीनों के अलावा हर समय हजारों यात्री यात्रा के लिये आते रहते हैं, लेकिन कार्तिक सुदी पूर्णिमा को, फाल्गुन सुदी तेरस को, चैत्र सुदी पूनम को एवं वैशाख सुदी तीज को हजारों लोग यात्रा के लिये आते हैं। कार्तिक सुदी पूर्णिमा के दिन द्राविड़ और वारिखिल्ल [illegible]

6 करोड मुनिवरो के साथ सिद्धि पद प्राप्त किया था । फागुण सुदी तेरस के दिन श्रीकृष्ण वासुदेव के दो पुत्रो ने 8½ करोड मुनिराजो के साथ सिद्धि प्राप्त की थी । अत इस दिन इस गिरिराज की परिक्रमा की जाती है और फिर यात्रियो की सघ भक्ति भाग्यशाली पाल लगाकर करते हैं । चैत्र सुदी पूनम के दिन श्री आदिनाथ भगवान के प्रथम गणधर श्री पुडरिक स्वामी ने इस तीर्थ पर 5 करोड मुनिराजो के साथ सिद्धि प्राप्त की थी । वैसाख सुदी तीज के दिन श्री आदिनाथ भगवान ने वरसी तप का पारणा किया था । अत इस दिन की स्मृति मे हजारो की सख्या मे इस तीर्थ पर ही वरसी तप करने वाले पारणा करते हैं । इसके अलावा सैकडो लोग यहाँ प्रतिवर्ष चौमासा तथा निन्यानवे की क्रिया करने आते हैं । इस तीर्थ पर सैकडो साधु साध्वी हर समय रहते हैं तथा बडे-बडे आचार्य भगवन्तो का विचरण एव चौमासा भी होता रहता है ।

श्री शत्रुजय महातीर्थ की तलेटी मे प्रथम तीर्थकर श्री आदिनाथ भगवान के चरण पादुका हैं । यात्री पहले यहाँ ही भक्ति भावपूर्वक चैत्य वन्दन कर शत्रुजय गिरिराज की यात्रा शुरु करते हैं । गिरिराज पर चढने हेतु सैकडो पगतीये हैं जिससे यात्रियो को चढने मे विशेष कठिनाई नही होती । मार्ग मे जगह-जगह बैठने हेतु स्थान बने हुए है तथा वहाँ गम व ठडे पानी पीने की व्यवस्था है । शत्रुजय तीर्थ का सारा प्रवन्ध सेठ आनन्दजी कल्याणजी की पेडी द्वारा होता है ।

तलेटी से जब गिरिराज की ओर चढते हैं तो थोडी दूर बाद ही 'धनवसी टूक' आती है । इस विशाल टूक मे श्री आदिनाथ भगवान वराजमान है । यह टूक बडी भव्य है जिसकी कला तथा कारीगरी अद्भुत है । इस टूक के पास ही अभी हाल ही मे समोसरण मन्दिर बना है जिसकी छटा देखने ही लायक है । नवटूक तथा दादा की प्रमुख टूक जाने के पहले 'हनुमान द्वार' आता है, यहाँ से ही दोनो मार्ग अलग-अलग हो जाते हैं । यहा खडे होने पर पालीताना शहर तथा शत्रुजय नदी का दृश्य बडा सुहावना लगता है ।

हनुमान द्वार से नो टूक जाने पर पहले चौमुख जी की टूक आती है । यह पर्वतराज श्री शत्रुजय तीथ की ऊँचो से ऊँची टूक है जहाँ मूलनायक प्रभु श्री आदिनाथ की चौमुख प्रतिमाजी विराजमान है । चौमुखजी की इस मोटी टूक के दो विभाग हैं । बाहर के विभाग को खरतरवसी तथा अन्दर के विभाग को चौमुख वसी की टूक कहते हैं । इसके बाद छीपावसीनी टूक आती है जिसमे भी मूलनायक श्री आदिनाथ प्रभु विराजमान हैं । फिर साकरवसीनी टूक आती है जहाँ चितामणी पार्श्वनाथ की पचधातु की प्रतिमा विराजमान हैं । इसके बाद उजमवाई की टूक आती है जिसमे नदीश्वर द्वीप का मुख्य मन्दिर है । फिर हेमवसीनी टूक आती है जिसके तीन शिखर वाले मुख्य मन्दिर मे श्री अजितनाथ प्रभ विराजमान हैं । इसके वाद प्रेमनसीनी टूक आती है जहाँ भी आदिनाथ प्रभु विराजमान है । इस टूक के नीचे उतरने पर पहाड मे 18 फुट ऊँची अद्भुत दादा (आदेश्वर भगवान) की मूर्ति विराजमान है जिसकी वर्ष मे एक बार ही पूजा होती है । फिर बाल वसीजी की टूक आती है जिसमे भी मूलनायक तरीके श्री आदिनाथ प्रभु ही विराजित हैं । इसके बाद शत्रुजय की सेठ मोतीशाह की विशाल टूक आती है । यह टूक बडी भव्य एव कलात्मक

है। इस टूक में 16 विशाल मन्दिर एवं 123 देहरीया है जिसे देख सेठ मोतीशाह की धर्म भावना एवं विशाल दृष्टिकोण का परिचय मिलता है। इस टूक के मुख्य मन्दिर में भी श्री आदिनाथ प्रभु विराजमान है।

सेठ मोतीशाह की टूक से बाहर निकलते ही शत्रुंजय तीर्थ के अधिष्ठाता देवाधिदेव श्री आदिनाथ भगवान की प्रमुख टूक आती है। इस टूक के भी दो विभाग हैं। प्रथम विभाग को 'विमलवसही' कहते हैं तथा दूसरे विभाग को 'हाथीपोल' कहते है। विमलवसही में प्रवेश करते ही दायीं तरफ श्री शान्तिनाथ भगवान का मन्दिर है। यहाँ यात्री को दूसरा चैत्यवन्दन करना चाहिये। इस मन्दिर के नीचे भाग में शत्रुजय तीर्थ की अधिष्ठात्री देवी श्री चक्रेश्वरी जी की देहरी है। विमलवसही के दायीं तरफ 14 तथा बायीं तरफ में 24 मन्दिर है।

हाथीपोल में प्रवेश करने पर यात्रियों के स्नान करने हेतु स्त्री पुरुषो के लिये अलग अलग स्नानघर बने हुए है जहां ही यात्री स्नान कर पूजा के वस्त्र पहनकर केशर पुष्प लेकर पूजा के लिये जाते है। हाथीपोल के सामने ही मध्य भाग में दादा श्री आदिनाथ भगवान के मन्दिर के दर्शन हो जाते है। यह मन्दिर 52 हाथ ऊँचा, 1245 कुंभ के मंगल चिह्न और 21 सिंह के विजय चिह्नों से शोभित है। यहां नही वह चार योगिनी, दस दिग्पाल, बत्तीस तोरण, बत्तीस पुतली और बहत्तर प्रधर स्तम्भो से युक्त है जिसे देख आश्चर्य होता है कि इस गिरिराज पर इस प्रकार के भव्य गगनचुम्बी मन्दिरों का निर्माण कैसे हुआ होगा।

दादा के प्रमुख मन्दिर के सामने ही पुन्डरिक स्वामी का मन्दिर है जहां यात्री को तीसरा चैत्य वन्दन करना चाहिये। दादा आदिनाथ भगवान के मन्दिर के पीछे पवित्र रायण वृक्ष तथा दादा के पगल्या हैं। यहां ही आदिनाथ प्रभु वृक्ष के नीचे अनेक समय पधारे थे। इसीलिये इस स्थान की यात्रा का बड़ा महत्त्व है। यहां पर यात्री को चतुर्थ चैत्य वन्दन करना चाहिये। महाराजा सम्प्रती और कुमारपाल, मंत्रीश्वर विमल शाह, वस्तुपाल, तेजपाल और पेथडशाह आदि के मन्दिर इसी दादा के दरबार में है जिनकी छटा अद्भुत है। दादा के मुख्य मन्दिर में चांदी की मनोहर छत्री में देवाधिदेव श्री आदिनाथ भगवान विराजमान हैं। उनके सामने ही मरुदेवी माता की मूर्ति है। ऐसी अद्भुत अवर्णनीय एवं भव्य दादा की मूर्ति को देखकर यात्री नाच उठता है तथा भव-भव के पाप दर्शन मात्र से ही नष्ट हो जाते है तथा नया जीवन प्राप्त होता है। यहां यात्री को देवाधिदेव की पूर्ण भक्तिभावपूर्वक पूजा करनी चाहिये। पांचवां और अन्तिम चैत्य वन्दन दादा के इसी मुख्य मन्दिर में करना चाहिये। शत्रुंजय के ऊपर के पहाड़ की मुख्य यात्रा पूर्ण कर जब यात्री पिछली तरफ रवाना होता है तो घेटीपाग की यात्रा आती है, जहां आदिनाथ भगवान के प्राचीन चरणपादुका है। यहां भी हाल ही में दो नये मन्दिरो का निर्माण हुआ है जो भी दर्शनीय है। इस यात्रा को करने से यात्री को दो यात्रा करने का लाभ प्राप्त होता है।

शत्रुंजय की यात्रा पूर्ण कर यात्री वापस गिरिराज से नीचे जब तलेटी पर आता है तब दायीं तरफ आगम मन्दिर है [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

है जो बडी ही आकर्षक और शिक्षाप्रद है। फिर आगे ही भाता घर है जहाँ यात्री को भाता मिलता है।

तलेटी से शहर की ओर आने पर तलेटी रोड पर ही केशरियानाथ जी का भव्य मन्दिर व काच का वासुपूज्य स्वामी का मन्दिर व अनेक छोटे-वडे मन्दिर आते हैं जो दर्शनीय हैं। इसी रोड पर अभी हाल ही मे बना जैन म्यूजियम भी देखने लायक है।

पालीताना शहर के पास ही कदमगिरी वहस्तगिरी के प्रसिद्ध तीर्थ हैं। हस्तगिरी पर 1250 फिट की ऊँचाई पर समवसरणकार नूतन जिनालय करोडो रुपयो की लागत से बना है जो वास्तव मे आधुनिक काल का अद्वितीय मन्दिर है।

इस प्रकार वहुत सक्षेप मे शत्रुजय तीर्थ का वर्णन किया गया है। ऐसे जगत् विख्यात शत्रुजय सिद्धक्षेत्र की यात्रा प्रत्येक मानव को अवश्य करनी चाहिये। यहाँ पर यात्री को 'छ्री' का पालन करना चाहिये। यदि इसका पालन न हो तो कम से कम रात्रि भोजन कदमूल का त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन तथा नवकारसी का पच्चखान तो अवश्य ही करना चाहिये। इस तीथ पर देवाधिदेव की पूजा शुद्ध मन से करने से कई भवो के सचित किये हुए कर्म नष्ट हो जाते हैं। इस तीथ पर साधु-साध्वियो को दान देना तथा साधर्मी की भक्ति करने से अधिक पुण्य उपार्जन होता है।

पालीताना शहर मे सब प्रकार की सुविधायें मौजूद हैं। यात्रियो के ठहरने हेतु 100 से अधिक धर्मशालायें हैं जहाँ सभी प्रकार के साधन मौजूद हैं। भोजन हेतु कई भोजनालय हैं, जहाँ यात्री शुद्ध व सात्विक भोजन कर सकता है। आने जाने हेतु रेलवे, वस व टैक्सी का उत्तम प्रबन्ध है। अहमदावाद मे पालीताना के लिये टैक्सी, बस तथा रेलवे सदैव उपलब्ध रहती है। अत एक बार इस तीर्थ की यात्रा कर अपना जन्म सफल बनावे यही प्रत्येक महानुभावो से सविनय प्रार्थना है क्योकि ऐसे तीर्थो की यात्रा करने से आत्मा कर्म बधन से मुक्त बनती है।

● ● ●

गत चातुर्मास पश्चात् शेष काल मे विचरित आदरणीय साधु-साध्वी म० सा० की जयपुर में पधारने की सूची

मुनि श्री जिनसेन विजय जी ठाणा 2
साध्वी श्री विजेता श्री जी ठाणा 5
साध्वी श्री गुणज्ञा श्री जी ठाणा 4
साध्वी श्री प्रशान्त श्री जी ठाणा 4
साध्वी श्री सुरेखा श्री जी ठाणा 3

पुरुषार्थ

□ राजमल सिंघी

□ सदाचार से जो धन उपार्जित किया जाता है वह न्याय सम्पन्न होता है। न्याय से धन कमाने वाला पुरुष इस लोक में शंकारहित होकर धन का भोग कर सकेगा, सत्पात्र को दान दे सकेगा। ऐसा द्रव्य परलोक में भी उसे सुखदायी होगा।
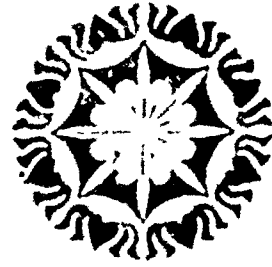
संसार के समस्त दार्शनिकों ने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को पुरुषार्थ के रूप में किसी न किसी प्रकार से स्वीकार किया है। पुरुषार्थ के इन भेदों के अनुसार संसार में 6 प्रकार के व्यक्ति हैं :—

(1) **अधमाधम**—जिसको उपरोक्त चार प्रकार के पुरुषार्थों का कोई ज्ञान ही नहीं है, जंगलों में जीवन बिताते हैं, शीत, ताप के कष्ट सहन करते हैं, परलोक को जानते ही नहीं, न वस्त्र पहनते हैं और न रहने के लिए कोई घर ही होता।

(2) **अधम**—जो परलोक को नहीं मानते, धर्मिष्ठ पुरुषों की हँसी उड़ाते हैं, मद्य-मांस का भक्षण करते हैं, दूसरों के दुःखों की परवाह नहीं करते हुए अपने ही सुख में लीन रहते हैं, अर्थ और काम को ही मानते हैं तथा धर्म का तिरस्कार करते हैं, आत्मा, [illegible] को मानते ही नहीं तथा युक्ति तथा उपदेश प्राप्त करते हुए भी नास्तिक ही बने रहते हैं।

(3) **विमध्यम**—धर्म, अर्थ, काम की आराधना सांसारिक सुखों के लिए करते हैं, मोक्ष की न तो निन्दा करते हैं और न स्तुति ही, चाहते हैं कि हम दान, शील, तप, भाव करके आगामी भव में पुत्र-परिवार, धन की प्राप्ति करें।

(4) **मध्यम**—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को मानते हुए, मोक्ष को परम तत्त्व मानते हैं, किन्तु मोह ममत्व को न छोड़ सकने के कारण धर्म, अर्थ, काम की ही आराधना करते हैं, मुनियों की भक्ति करते हुए दान, शील, तप, भाव में लीन रहते हैं एवं [illegible] करते हैं।

(5) **उत्तम**—[illegible]

हैं। क्रोध, मान माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, रति-अरति, शोक, भय, घृणा आदि दुर्गुणो एव धन-धान्य, पुत्र-परिवार को छोडकर चारित्र धर्म अगीकार करते हैं। शत्रु-मित्र, निंदक-पूजक, मणि-कचन, सज्जन-दुर्जन, मान-अपमान, सुन्दर-कुरूप इत्यादि को समान भाव से देखते हैं। समस्त जीवो को हितकारी उपदेश देते है। पूर्ण अहिंसक, सत्यवादी, अस्तेयी, ब्रह्मचारी अपरिग्रही होते हैं। इस प्रकार पच महाव्रतधारी, भिक्षा-वृत्ति से जीने वाले, सामायिक मे लीन धर्मोपदेशक ही सद्गुरु होते हैं।

(6) उत्तमोत्तम—जो उत्तम पुरुषो के ध्येय हैं, पूज्य, वन्दनीय, स्तवनीय, सर्वथा राग-द्वेष रहित, केवल ज्ञान से लोक-अलोक को बताने वाले, प्रमाण-युक्त वचन बोलने वाले, गणधरो को ज्ञान देने वाले, निर्विकार आगमो के अधिपति, शासन-नायक, शिव-सुखदायक, परम कृपालु ऐसे धर्म चक्रवर्ती तीर्थंकर ही उत्तमोत्तम पुरुष होते हैं।

हमे सोचना चाहिए कि हम किस प्रकार के व्यक्ति हैं एव हमे उत्तरोत्तर ऊची श्रेणी के पुरुष बनने का अथक प्रयत्न करना चाहिए।

पुरुषो के 6 भेद जानने के पश्चात् अब हम उपरोक्त चार पुरुषार्थो का विवेचन करें—

(1) धर्म—जिस पुरुषार्थ से समस्त प्रकार का उदय हो एव मोक्ष प्राप्ति हो, उसको धर्म कहते हैं। दुर्गति मे पडते हुए प्राणियो को धारण करने के कारण इसको धर्म कहते हैं। यह दस प्रकार का, सर्वज्ञ का बताया हुआ और मुक्ति दिलाने वाला है। जैन, बौद्ध, साख्य, शैव, भगवत्, पातजलि सभी दर्शनो ने धर्म के दस लक्षण भिन्न-भिन्न तरीके से बताये हैं। जैन तत्त्ववेत्ताओ ने जो धर्म के दस लक्षण बतायें हैं वे निम्न हैं—

(1) क्रोध का अभाव, (2) मान का अभाव, (3) माया का अभाव, (4) लोभ का अभाव, (5) तप, (6) सयम, (7) सत्य, (8) अन्त करण की पवित्रता—सब जीवो के साथ अनुकूल व्यवहार, (9) सब प्रकार के परिग्रह का त्याग, (10) ब्रह्मचर्य।

धर्म के कई भेद हैं—जैसे (1) साधु-धर्म, गृहस्थ-धर्म, (2) दान, शील, तप, भाव। दान धर्म भी पाच प्रकार का होता है—(1) अभय दान, (2) सुपात्र दान, (3) उचित दान, (4) कीर्ति दान, (5) अनुकपा दान। ब्रह्मचर्य के पालन से शील धर्म होता है। तप दो प्रकार के होते हैं—बाह्य एव आभ्यन्तर। ये दोनो भी 6-6 प्रकार के होते हैं। भावना भी पांच प्रकार की होती है।

(2) अर्थ—जिससे सभी प्रयोजनो की प्राप्ति हो उसको अर्थ कहते हैं। धार्मिक पुरुषो को यह पुण्य के फलस्वरूप मोक्ष-सुख देता है। विषयी-जनो को विषय की प्राप्ति कराता है, व्यापारियो को व्यापारिक वृद्धि कराता है, कुचरित्री को कुकर्म मे ले जाता है। अर्थ दो प्रकार का होता है—न्याय-सम्पन्न एव अन्याय सम्पन्न। न्याय सम्पन्न हितकारी होता है और अन्याय सम्पन्न अहितकारी। सदाचार से जो धन उपार्जित किया जाता है वह न्याय सम्पन्न होता है। न्याय से धन कमाने वाला पुरुष इस लोक मे शंकारहित होकर धन का भोग कर सकेगा, सत्पात्र को दान दे सकेगा। ऐसा द्रव्य परलोक मे भी उसे सुखदायी होगा। अन्याय से प्राप्त धन इस लोक मे दड का पात्र होगा

ग्रौर परलोक में उससे नरक-कष्ट मिलेगा। इस प्रकार न्याय से प्राप्त धन ही ग्रर्थ नाम का पुरुपार्थ है।

(3) **काम**—सभी इन्द्रियों में प्रीति होना काम कहलाता है। काम के दो भेद—भोग ग्रौर उपभोग होते है। एक बार भोगी जाने वाली वस्तु भोग ग्रौर ग्रनेक बार भोगी जाने वाली वस्तु उपभोग वाली कही जाती है। भोग या उपभोग शास्त्र की मर्यादा के ग्रनुसार हो तो काम कहलाता है। यदि ग्रनीति से भोग या उपभोग किया जावे तो वह कुभोग कहलाता है। जैसे गृहस्थों के लिए स्वदारा संतोप, पाँच तिथियों, पंच कल्याणक के दिनों, पर्युपण ग्रादि में ब्रह्मचर्य का पालन, ग्रमुक ग्रायु के वाद पूर्ण ब्रह्मचर्य पालना, इत्यादि। जो मनुष्य शास्त्र एवं लौकिक व्यवहार के ग्रनुसार संसार का व्यवहार चलाता है वह काम नामक पुरुपार्थ की साधना करता है।

(4) **मोक्ष**—कर्म से मुक्त होना ही मोक्ष कहलाता है। मुक्ति की प्राप्ति के लिए मोह को छोड़कर सत्य पदार्थ का चितन करना, राग-द्वेप से दूर रहना, पाप की भांति पुण्य का भी त्याग करना क्योंकि पाप एवं पुण्य दोनों का क्षय होने से ही केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। सभी ग्राठ कर्मों के नाश से ही मुक्ति की प्राप्ति होती है। सही ज्ञान, दर्शन, चारित्र से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है। प्रमाद, ग्रविरति, योग ग्रौर मिथ्यात्व के त्याग से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार पुरुपार्थ को संक्षेप में समझते हुए हमको धर्म की सम्यग रूप से ग्राराधना कर मोक्ष प्राप्ति का पूर्ण रूपेण प्रयत्न करना चाहिए। मोक्ष का ध्येय रखने से सांसारिक सुख तो स्वतः ही मिल जायेगा, जैसे धान की प्राप्ति के लक्ष्य से घास तो स्वतः ही मिल जाता है।
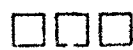
□□□

आचार्य श्रीमद् विजयवल्लभ सूरीश्वरजी जीवन-झलक

☐ कुमारी सरोज कोचर

• मैं न जैन हू, न बौद्ध न वैष्णव हू न शैव न हिन्दू हू न मुसलमान। मैं तो वीतरागदेव परमात्मा का खोजने के मार्ग पर चलने वाला एक मानव हू यात्री हू।

दु खेष्वनुद्विग्नमना सुखेषु विगतस्पृह ।
वीतरागभयक्रोध स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥

दु खो की प्राप्ति होने पर जो उद्विग्न नही होते, सुखो की प्राप्ति मे जो सर्वथा नि स्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गए हैं, ऐसा मुनि स्थिर बुद्धि कहा जाता है।

भारत की पावन वसुन्धरा एव धूलि का यह सौभाग्य रहा है कि यहाँ महामानवो ने जन्म लेकर सकट की घडी मे ही मात्र अपना महत्त्वपूर्ण योगदान नही दिया अपितु वे अपने कर्मों के प्रताप से विश्व के अनुकरणीय पात्र बनते गये है। ऐसी ही विरल विभूति जो अपने कर्मों के प्रताप से परहित मे सर्वस्व समर्पण की भावना से विश्व मे अनुकरणीय है वह विभूति है युग प्रवर्तक जैनाचार्य श्रीमद् विजयवल्लभ सूरिजी महाराज। उनके विचार एव आचार, ज्ञान तथा क्रिया का दिव्य प्रकाश आज भी धर्म, समाज एव भारतीय सस्कृति के सभी अचलो को आलोकित कर रहा है। आपका व्यक्तित्व जहाँ महान्, विराट् एव तेजस्वी था वही आप मे उच्च ज्ञान जैन दर्शन एव सस्कृति का हृदय एव लोक मगल व्यक्तित्व का ताना-बाना जुडा हुआ है।

गुजरात राज्य के वडोदा मे श्रीमाली परिवार मे सुप्रसिद्ध श्रेष्ठी श्री दीपचन्द भाई के घर मे पूजनीय माता इच्छा बाई की पुनीत कुक्षि से भाई दूज अर्थात् कार्तिक शुक्ला द्वितीया को वि स 1927 के दिन आकर्षक, ओजस्वी, सुन्दर शिशु का जन्म हुआ। आपका नाम छगन रखा गया। बाल्यावस्था मे ही आप अपनी धर्म निष्ठा के कारण ही न केवल अपने घर मे ही सबके प्रिय बने अपितु आस-पडौस मे भी प्रिय होते हुए स्तुत्य एव श्रद्धा के पात्र बन गये। किन्तु काल की क्रूरता यह रही कि माता-पिता के असीम दुलार वात्सल्य एव पावन निष्ठा से आप वचित रह गये। सासारिक ज्ञान से शून्य एव जीवन की गतिविधियो से अनभिज्ञ बालक के लिए मा का पावन आश्रय ही सर्वस्व होता है किन्तु मृत्यु के अन्तिम क्षणो मे माँ ने जो उपदेश, सूत्र, आशीर्वाद दिया वही उपदेश बालक छगन के जीवन का सम्बल एव मार्गदर्शक बना। सच्चे सपूत के रूप मे आपने उसी मत्र को हर पल, हर क्षण

लक्ष्य में रखते हुए आत्म विश्वास के साथ कार्य किया। वह सूत्र था—बेटा! अविनाशी धाम में पहुंचाने वाले धन को प्राप्त करने और जगत् का कल्याण करने में अपना जीवन बिताना।

यदि बिन्दु रूप में भी संस्कार हो तो वह वातावरण प्राप्त कर साकार रूप धारण करता है फिर बालक छगन का चिन्तन, मनन एवं क्रियान्विति तो मां के पावन शब्दों पर ही रहती थी। परिणामस्वरूप बड़ौदा में विक्रम संवत् 1942 में स्वर्गीय आचार्य श्रीमद् विजयानन्द सूरीजी महाराज की प्रवचन सभा के पश्चात् आपने अभिलाषा व्यक्त की कि मुझे वह धन चाहिए जिससे अनन्त सुख मिले। आचार्य श्री ने आशीर्वाद दिया कि योग्य समय पाकर मनोकामना पूर्ण होगी। वहीं से जीवन ने नया मोड़ लिया। अहमदाबाद में आचार्य श्री ने मुनि श्री हर्ष विजयजी से कहा—छगन के कारण धर्म की बहुत बड़ी प्रभावना होगी। यह मेरी भविष्य वाणी रही। सन्तों के वचन मिथ्या नहीं होते। जबकि संसार सन्तों के कार्य में सदैव बाधक रहता है। अनेक संघर्ष एवं झंझावतों के पश्चात् वह पुनीत दिवस आया जिसको छगन ने प्राप्त करने के लिए अनेकों कष्ट सहे। आपके जीवन का विशिष्ट पुनीत दिवस वैशाख सुदी त्रयोदशी संवत् 1944 का रहा। उस दिन शुभ लग्न में आचार्य श्रीमद् विजयानन्द सूरिजी महाराज ने आपको दीक्षा दी। आपका नाम वल्लभ-विजय रखा गया तथा मुनि श्री हर्षविजयजी म. सा. के आप शिष्य बने। दीक्षा के बाद प्रथम चौमासा राधनपुर में ही हुआ। वैशाख सुदी 10 संवत् 1946 वि. के दिन अन्य मुनियों के साथ आचार्य श्री ने आपको बड़ी दीक्षा दी। अपने गुरु मुनि श्री हर्ष विजयजी के जीवन सूत्र के टूटने के पश्चात् आप आचार्य श्री के चरण कमलों में आ गये। तब आचार्य श्री ने कहा—मैं वल्लभ विजय को पंजाब के लिए तैयार करता हूँ। मुझे विश्वास है कि यह पंजाब की जरूर रक्षा करेगा। बस उसी दिन से आप पंजाब के प्राणधार बन गये।

दुर्भाग्यवश बड़ाला गांव में सं. 1953 में ज्येष्ठ सुदी सप्तमी के दिन आचार्य श्री ने इस असार संसार का परित्याग किया। इस असह्य दुर्घटना से आपके जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। किन्तु आचार्य श्रीजी के वचनों के परिपालनार्थ एवं ध्येय पूर्ति में आप रत हो गये। सर्व प्रथम गुंजरावाला में आपने आत्म संवत् प्रारम्भ, आचार्य श्री का समाधि मन्दिर बनवाना, श्री आत्मानन्द जैन सभा की स्थापना, पाठशाला की स्थापना, जैन कॉलिज के लिए 'पाई फण्ड' की व्यवस्था, श्री आत्मानन्द जैन-पत्रिका के प्रकाशन की प्रेरणा आदि कार्य किये।

आप सच्चे अर्थों में आदर्श शिक्षाविद् थे। सम्पूर्ण पंजाब का चहुंमुखी विकास करने में तो आप लगे ही रहे किन्तु अन्यत्र भी शिक्षा-प्रेमी के आदर्श को मानव समाज के समक्ष रखा। ऐसी शिक्षण संस्थाओं में बम्बई का श्री महावीर जैन विद्यालय, श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय, वरकाणा, श्री पार्श्वनाथ उम्मेद कॉलिज, फालना, श्री आत्माराम जैन कॉलिज, अम्बाला, श्री आत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरांवाला, श्री आत्मानन्द जैन लाइब्रेरी, अम्बाला, श्री आत्मानन्द जैन कन्या पाठ-शाला, गुजरांवाला आदि हैं। इनके अतिरिक्त अनेकों प्राइमरी एवं मिडिल स्कूल हैं।

देश के नव-निर्माण एवं उसको उन्नत बनाने के लिए आपने कहा कि आवश्यक है सभी को कार्य करना चाहिए। इसके लिए एक

होकर काय करना, गाव का सुधार, गरीबी निवारण, धर्म आराधना, शिक्षा प्रसार सभी की रोटी रोजी हेतु प्रमुख रूप से कार्य करना चाहिए। देश की उन्नति स्वय की उन्नति है। अत स्वय विदेशी वस्त्र के स्थान पर शुद्ध खादी का प्रयोग करते हुए औरो को भी खादी पहिनने के लिए प्रेरित करते। देश विभाजन के समय जो जैनी गुजरावाला मे रह गये थे उन सभी के लिए आपकी अपील थी कि मात्र भारत सरकार द्वारा मेरी सुरक्षा करके भारत ले जाये जाने पर मैं जब तक ये 250 श्रावक और साधु-साध्वियां यहाँ हैं तब तक मैं आज अपनी जान बचाने के लिए यहाँ से नही जाऊँगा। अन्त मे भारत सरकार द्वारा सभी श्रावक-श्राविकाओ, साधु-साध्वियो सहित आप श्री को भारत लाया गया। फिर आपने भारत के सभी जैनो से प्रार्थना की कि—जो भी भारतीय पाकिस्तान से आये हैं वे सभी सहायता के योग्य हैं। उनको अपना भाई-बहिन समझते हुए यह समझो कि इनकी सेवा करना हमारा कतव्य है। पजाब सरकार से भी निवेदन है कि जो हिन्दू पाकिस्तान मे रह गये हैं उनको सुरक्षित लाने की व्यवस्था करते हुए पाकिस्तान मे जो धर्म स्थान रह गये हैं उनकी रक्षा करने का उचित प्रबन्ध करें।

महापुरुषो की लेखनी मे भी अनूठी शक्ति होती है। आपने अनेक जैन धर्म सम्बन्धी एव इतर पुस्तकें लिखी। आचार्य महाराज द्वारा विरचित 'तत्त्वनिर्णय प्रसाद' के प्रस्तावना आदि अवशिष्ट कार्य को पूर्ण किया। श्रीमद् विजयानन्द सूरिश्वरजी महाराज का जीवन-चरित्र, 11 प्रकार की पूजा, श्री पचपरमेष्ठी की पूजा, भगवान महावीर की आज्ञाएँ, गप्पदीपिका समीरा आदि अन्य कृतियो की रचना आपकी लेखनी से हुई।

कर्मवीर एव धर्मवीर की सर्वत्र पूजा होती है। इसी प्रकार सम्पूर्ण समाज आपको स 1981 मे लाहौर चौमासे मे मार्गशीर्ष सुदी पचमी, सोमवार को आचार्य की पदवी प्रदान की गयी। तत्पचात् पोरवाल सम्मेलन मे आप श्री आचार्य को 'कलिकाल कल्पतरु, अज्ञान तिमिर तरणि' की उपाधि से विभूपित किया। सच्चे साधु की भाति सेवा, क्षमा, त्याग, तप, सहिष्णुता, कर्तव्यपरायणता आदि अनेक गुणो के आप आगार थे। किन्तु काल की महिमा अलौकिक है वह गुण, अवगुण किसी का भी ध्यान नही रखता। उसके समक्ष टूटती सासो को कोई भी नही जोड सकता है। अपनी अन्तिम घडी के दृष्टा आप नवकार मत्र का जाप करते-करते रात्रि के दो बजकर बत्तीस मिनट पर चिर ध्यान मे लीन हो गये। अब तक जहा रवि की साधना रश्मियो का आलोक जगमगा रहा था अब वहा अधकार की कालिमा बिखर गई थी। सम्पूर्ण जैन समाज ही नही मानो अन्य समाज के व्यक्ति भी अनाथ हो गये थे। प्राणी मात्र के प्रति आपके उद्गार इस प्रकार थे—

मैं न जैन हूँ न बौद्ध, न वैष्णव हूँ न शैव, न हिन्दू हूँ न मुसलमान। मैं तो वीतरागदेव परमात्मा को खोजने के मार्ग पर चलने वाला एक मानव हूँ, यात्री हूँ। आज सब शाति की इच्छा करते हैं, परन्तु शाति की खोज तो सबसे पहले अपने ही मन मे होनी चाहिए।

जीव दया का काम पुण्य का काम है। इस काम को करने वाले पुण्य के हिस्सेदार होते हैं। अहिंसा का प्राण प्रेरक सन्देश प्रत्येक शहर, प्रत्येक गाव, प्रत्येक समाज, प्रत्येक मन्दिर, प्रत्येक मस्जिद, प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक घर तक पहुचाने का प्रयत्न होना चाहिए।

जिन पड़िमा प्रभाव

धनरूपमल नागोरी

तो साहब मैं उनके ध्यान में चढ़ गया। उन्हें खूब उपालंभ दे देकर याद किया। आधा घंटे तक मन को उनके ध्यान में पिरो डाला और उपालंभों का पर्वत खड़ा कर दिया। आखिर परिणाम बड़ा सुखद आया। ऐसा लगा मानो किसी ने करण्ट लगा दिया हो।

अभी पंचमकाल या कलिकाल चल रहा है। पांचवां आरा काल के हिसाब से है, जिसका नाम दुखमा है। दुःख अधिक हो उसे दुखमा कहते है। लेकिन भव्य प्राणियों को घबराने की बात नहीं। आराधक प्राणियों को डरने की बात नही। कारण दो बड़े पुष्ट अवलम्बन हमें इस समय भी उपलब्ध है। जिनका सहारा अथवा शरण स्वीकारने से भवसागर आसानी से तिरा जा सकता है।

ये अवलम्बन है, जिन पड़िमा तथा जिन-वाणी या जिनागम। इसीलिये तो गीतार्थ मुनि देवचन्द्रजी ने स्नात्रपूजा मे फरमाया— "जिन पड़िमा जिन सारखी, कही सूत्र मंझार" अर्थात् जिन प्रतिमा साक्षात् जिनरूप है। उसमें और परमात्मा में अन्तर नहीं। उनकी भक्ति करो तब, उन्हें वही साक्षात् समझ कर करो तो उसका आनन्द कुछ अपूर्व होगा।

आज जिन प्रतिमा की भक्ति हम करते हैं और कराते है, लेकिन उसकी जो उपलब्धि हमे होनी चाहिये, वह नही मिलती। हम क्रिया करते हुये भी अधूरे है। खोखले है। खाली है। कारण स्पष्ट है कि हम ने जिनोपासना जिनरूप समझकर नही की। स्वाद किसी भी वस्तु का तभी आता है, जब हम उसमें रचेपचे होते है। अन्यथा अति स्वादिष्ट वस्तु का स्वाद भी हमें नीरस ज्ञात होगा।

जिन पड़िमा प्रत्यक्ष प्रभावी है, इसकी अनेकों घटनाएँ आज भी सुनने, पढ़ने और अनुभव करने में आती है। एक भाई ने अपने जीवन में बीती ऐसी घटना सुनाई। कहने लगे मुझे [illegible]

समीप आ रहे थे। मैं बहुत हताश और चिन्तित था। समझ नही पड रहा था क्या किया जाय ? इतने मे तो एक विचार दिमाग मे कौंध गया। सोचा जहाँ जाना है और अपना दुखडा अर्ज करना है उनका ही ध्यान क्यो न किया जाय ? वे तो तीनो लोको के नाथ हैं। त्रिकालदर्शी है। सब तरह के रोगो को मिटाने मे पूर्णतया समर्थ है।

तो साहब मैं उनके ध्यान मे चढ गया। उन्हे खूब उपालभ दे देकर याद किया। आधा घटे तक मन को उनके ध्यान मे पिरो डाला और उपालभो का पवत खडा कर दिया। आखिर परिणाम बडा सुखद आया। ऐसा लगा मानो किसी ने करण्ट लगा दिया हो। मैं उठ खडा हुआ। मेरा रोग सर्वथा चला गया। नर्स आई। डॉक्टर साहब भी आये। पूछा-ताछा और मुझे अस्पताल से छुट्टी देदी।

मैं घर आया और परिवार के साथ पालीताना दादा के दरबार मे हाजिरी देने रवाना हो गया। पालीताना पहुँचा। हृदय बहुत प्रफुल्लित हो गया। अब भक्ति की परीक्षा की घडी आ गई।

पहला दिन। पुत्रो ने डोली करने का आग्रह किया। मैंने मना कर दिया। मैंने कहा कि जिसने यहाँ तक बुलाया है ? क्या वह ऊपर बिना डोली नही बुला सकता ? खैर, पहले दिन हारना पडा। रोया, पश्चात्ताप किया, हृदय उदास हो गया।

दूसरे दिन भी ऐसा ही रहा। केवल सौ-पचास कदम अधिक चढ सका। लेकिन तीसरा दिन सफलता लेकर आया। लगा आज पुण्य फल गया। दादा ने बुलाया और धीरे-धीरे उसी के नाम का टेका लेते-लेते पर्वत चढ गया। दरबार मे हाजिर हो गया। दादा सामने थे। उनके सामने मैं हाथ जोड कर खडा था। प्रसन्नता का समुद्र हिलोरे ले रहा था। अपार आनन्द था। हर्ष के अश्रु सहसा ढुलक पडे। और जाना-पहचाना, सच्चे दरबार की महिमा को। उस करुणावत प्रभु के दीदार को।

कहने का तात्पर्य यह है कि आज इस पचमकाल मे भी प्रभु प्रतिमा का प्रभाव साक्षात् है। कमी है तो केवल श्रद्धा, भावना और अतरग भक्ति की।

ऐसी एक नही अनेको घटनाएँ है। अत हमे जिनभक्ति, जिनरूप समझ कर करनी चाहिये ? तभी सही आनन्द मिलेगा।

□□

मगल–कामना

प पू आचार्य इन्द्रदिन सूरीश्वरजी महाराज का दिल्ली मे एस्कोट हॉस्पिटल मे सफल दिल का आपरेशन हुआ है। जयपुर श्री सघ आपके शीघ्र स्वास्थ्य लाभ हेतु कामना करता है एव उनकी मगलकामना हेतु बन सके वहाँ तक आयम्बिल एव जाप करे।

पर्युषण पर्व और हमारा कर्तव्य....

• पृष्ठ 12 का शेष

बना हुआ है, वह भी कैसे पापों को धोने का कार्य कर पायेगा ?

चारों गति के चक्कर में अब मनुष्य की बारी आई। मनुष्य को श्रद्धा-आचरण-चारित्र-व्रत-विरति तथा पच्चक्खाण आदि का धर्म प्राप्त होता है तब वह इस जन्म के तो क्या लेकिन सेंकड़ों जन्मों के पापों को भी अल्पकाल में धो सकता है। पशु-पक्षी-नरक और स्वर्ग की तीनों गतियों में जिन पापों को जीव नहीं धो सका उन सब पापों को इकट्ठ स्वरूप में सिर्फ मनुष्य के एक ही जन्म में धोये जा सकते हैं। इतनी मनुष्य जन्म की विशेषता है और क्षमता भी है। विकास साधना पर अग्रसर हुई मानव आत्मा का सामर्थ्य काफी ज्यादा है ? अब यही आध्यात्मिक जिम्मेदारी मानव को अदा करनी चाहिये कि वह अनेक पापों को धोकर छुटकारा पाये। "सव्व पावप्पणासणो" नमस्कार महामंत्र में दर्शाये गये इस सातवें पद के अर्थ—"सब पापों का नाश हो" को लक्ष्य में लेकर संकल्प करके यदि मानव धर्म करने लगे तो इस साध्य को साधा जा सकता है। कौनसा धर्म श्रेष्ठ ? कौनसा धर्म अश्रेष्ठ ? इससे हमें विश्व के हिन्दू-इस्लाम या ख्रिस्ती आदि धर्मों में कौनसा श्रेष्ठ है यह नहीं सोचना है। परन्तु धर्म दो अर्थों में कहा जाता है—(1) विधेयात्मक धर्म और (2) निषेधात्मक धर्म। (1) विधेयात्मक धर्म में क्या-क्या करना चाहिये कि बातें की गई हैं। जिसमें दर्शन, पूजा, यात्रा, सामायिक, तप व्रत, जप, पच्चक्खाण, प्रतिक्रमण आदि की बातें की गई है। दूसरे निषेधात्मक प्रकार क्या-क्या नहीं करना चाहिये, क्या निषेध वर्ज्य है ? की बातें की गई है। उदाहरणार्थ रात्रि भोजन का निषेध किया गया है। हिंसा, झूठ, चोरी आदि अनेक पाप नहीं करने चाहिये ऐसी आज्ञा दी गई है।

यदि आपको धर्म ही धर्म करने के लिए कहा जाय तो आप विधेयात्मक धर्म करते ही जायेंगे लेकिन निषेधात्मक का त्याग किये बिना यदि सिर्फ विधेयात्मक धर्म ही चलता जायेगा तो साधक सही अर्थ में सच्चा और वास्तविक पूर्ण धर्मी नहीं बन पायेगा। विधेयात्मक धर्म को करते-करते साथ ही उसे यह भी सोचना चाहिये कि निषेधात्मक का मैं पालन करूँ। उपरोक्त दोनों ही प्रकार में परमात्मा की आज्ञा है। "आणाए धम्मो" आज्ञा पालन में ही धर्म है। आज्ञा उभय प्रकार की है। निषेधात्मक मे पाप प्रवृत्ति वर्ज्य है। जिनमें पाप दोष लग रहे है उन सबका त्याग करना ही चाहिये। विधेयात्मक आज्ञा पालन रूप धर्म में आप दर्शन-पूजा, सामायिक प्रतिक्रमण आदि करते भी जायेंगे लेकिन हिंसा झूठ-चोरी आदि प्रवृत्तियों का त्याग नहीं होगा तो आप कैसे कहलायेंगे ? [illegible] कोई [illegible] वंचक या ठग भी कह सकता है। [illegible] और आपके धर्म की दोनों की निन्दा [illegible]

करेंगे । इसलिए सर्व प्रथम आप यह सोचिये कि आपको जो-जो करना है वह करते भी जाइये और साथ ही न करने योग्य निपेधात्मक का त्याग भी करते ही जाइये ।

यदि यह प्रश्न खडा हो कि अग्रिमता या प्राधान्यता किसे देनी चाहिए ? तो मेरे मत से मैं कहूँगा कि—प्राथमिकता निपेधात्मक धर्माज्ञा को देनी चाहिए । ताकि फायदा यह होगा कि आप पहले से ही सैकडो पापो से बचते जायेंगे और शुद्ध बनते जायेंगे । अब इस पर विधेयात्मक धर्माज्ञा का पूरा प्रभाव पडेगा । वह भी सुशोभित होगा । अत आप कितना धर्म कर रहे हैं कि अपेक्षा कितने पापो का त्याग कर रहे है यह निर्णय करना ज्यादा अच्छा रहेगा । धर्मी बनने के साथ-साथ निष्पाप' बनना बहुत ही अच्छा है । काफी उच्च कक्षा की बात है । कई बार ऐसा देखा जाता है कि विधेयात्मक धर्म करना लोगो को आसान-सरल लगता है परन्तु निपेधात्मक त्याग प्रधान, पापो को न करने वाला धर्म कठिन लगता है । जैसे सामायिक करना आसान लगता है लेकिन झूठ न बोलना काफी ज्यादा कठिन लगता है ।

सामायिक करना यह क्रियात्मक धर्म है, और इसी शुद्ध सामायिक की क्रिया मे से समता का गुण जगाने से असत्य से बचा भी जायेगा यह गुणात्मक धर्म है । हम जितने क्रिया साधक बनते जायें उतने ही साथ-साथ गुणोपासक गुण साधक भी बनते जायें तो काफी अच्छा होगा और उभय साधक बन पायेंगे ।

पर्युषण का साध्य—

सभी पर्वो मे शिरोमणि सर्वश्रेष्ठ ऐसा पर्युषण महापर्व है । इसे पर्व कहा है त्यौहार नही । त्यौहार मे खाना-पीना, मौज-मजा करना आदि की प्रधानता रहती है । जबकि पर्व मे खाना-पीना-मौज-मजा आदि का त्याग रहता है । अत पर्व त्याग प्रधान होते हैं । जैन धर्म के मासिक, चातुर्मासिक, षट्मासिक और वार्षिक सभी पर्वो मे खाने-पीने आदि के त्याग की प्रधान्यता बताई गई है । "पुनातीति पर्व" पर्व शब्द की इस सस्कृत व्याख्या के आधार पर ही सोचिए कि जो आत्मा को पवित्र करे वह पव है ।

पाप कर्मो से मलीन आत्मा को जो पवित्र करे वह पर्व कहा जाता है । सभी पर्वों मे यही साध्य रखना अनिवार्य है और इसी साध्य को विशेष रूप मे पर्युषण महापर्व मे चरितार्थ करना चाहिए । सैकडो प्रकार के पाप कर्म करके आत्मा मलीन हो चुकी है । इस मलीनता को दूर करने का सुवर्ण काल ही पर्वाराधना का काल है । इसमे विधेयात्मक और निपेधात्मक उभय धर्म का पालन होता है । पर्युषण पर्व के उपलक्ष्य मे लोक तपश्चर्या काफी करते हैं और करनी ही चाहिये । तप आत्मा का गुण है । देह इसके लिए साधन मात्र है । देह के माध्यम से यथाशक्ति तप करके पूर्व पापो का प्रक्षालन करना है । साथ ही शास्त्र श्रवण और प्रतिक्रमण करने ही चाहिये । कल्पसूत्रादि जैसे शास्त्र श्रवण से ज्ञान-जानकारी मिलेगी और प्रतिक्रमण से पापो की निवृत्ति होगी । परिणामस्वरूप आत्म-शुद्धि होगी । सही अर्थ मे यही पर्युषण का कर्तव्य भी है और सदेश भी है । प्रति + क्रमण = प्रतिक्रमण । हमने पापादि निन्द्य कार्य करके जो अतिक्रमण किया है उसी से छुटकारा पाने के लिए, पश्चात्ताप भावपूर्वक प्रतिक्रमण करना अर्थात् किये हुए पापो से पीछे हटना ।

पूर्व संचित पापों की अशुद्धि ने ही आत्मा को अशुद्ध-मलीन कर रखा है। अब इसे पुनः शुद्ध करने के लिए पर्युषण जैसे महापर्व की नैमित्तिकता और उपयोगिता काफी लाभप्रद है।

अब आप सोचिये कि विश्व भर में कौन सर्वथा निष्पाप और शुद्ध है? शायद करोड़ों में से दो-पाँच को भी चुनना मुश्किल है। पाप—पाप ही है। हिंसा, झूठ, चोरी आदि सैकड़ों किस्म के पाप है। चाहे इन्सान जिस किसी भी धर्म का हो यदि वह पाप कर चुका है? या वर्तमान प्रवृत्ति पापजनक है? या पूर्व संचित पाप है तो उसे पर्युषण की उपासना अवश्य करनी ही चाहिये। चूंकि यह पर्युषण पर्व पाप क्षयकारक, आत्मविशुद्धि साधक पर्व है। प्रत्येक व्यक्ति को शुद्ध और पवित्र तो बनना ही चाहिये अतः उसे ऐसे पर्युषण महापर्व का अवलम्बन लेना ही चाहिये। इस तरह पर्युषण महापर्व की सर्वजन उपयोगिता सिद्ध होती है।

□ □ □
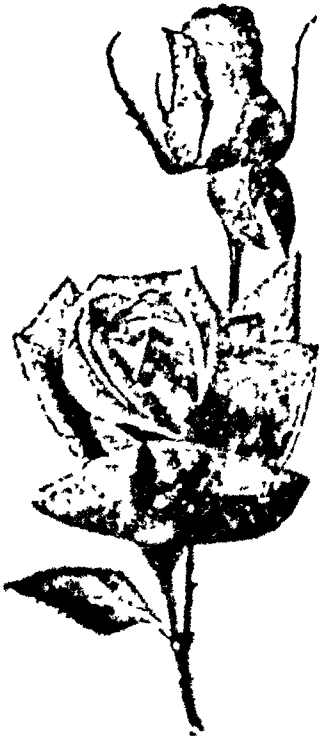
संसार के सभी दिन एक से नहीं जाते हैं। सूर्य उगता भी है एवं अस्त भी होता है। दिन के बाद रात्रि और रात्रि के बाद दिन, यह तो कुदरत का सनातन नियम है। दुःख और विपत्ति का झटका अगर मानव पर न होता तो मानवता का मीठे जीवन में रस नहीं होता। झटके से ही जागृति आती है और अच्छे आचार विचार की समझ प्रकट होती है।

जैन पूजाओ का महत्त्व

☐ नवीन भण्डारी

विविध पूजा सग्रह की पुस्तक का विमोचन महोत्सव माघ वदी दशमी को हुआ। यह पुस्तक पूज्य नित्यवर्धन सागरजी महाराज साहब तथा श्री रणजीतसिहजी भण्डारी की प्रेरणा से श्रीमान् सरदारमलजी लूणावत की ओर से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक की आवश्यकता बहुत थी। श्री लूणावतजी ने अपने द्रव्य का सदुपयोग किया। इस पुस्तक के प्रकाशन के लिये एक सपादक मण्डल श्रीमान् धनरूपमलजी नागोरी, श्री ज्ञानचद जी भण्डारी एव श्री मनोहरमलजी लूणावत का बनाया गया। यह पुस्तक श्रीमान् दुलीचद जी टाक ने पूज्य साध्वीजी श्री विनीता श्री जी महाराज को समर्पित की। इस अवसर पर रणजीतसिहजी भण्डारी ने इस पुस्तक के सबध मे अपने विचार सभा के समक्ष रखे। उसमे मुख्य विषय तीन बताये—

(1) लोग पूजाओ को एक आडम्बर बताते हैं। जब भगवान् का समवसरण होता है उस वक्त देव समुदाय भगवान की महिमा करने के लिये समवसरण की रचना करते हैं, उसमे भारी हिंसा होती है फिर भी देवताओ को भक्ति का लाभ होता है क्योकि उनकी भावना हिंसा की नही होती है और लोगो के बोध पाने की भावना होती है जैसा मरुदेवी माता यदि समवसरण के रिद्धि नही देखती तो शायद उनको केवलज्ञान प्राप्त होकर मुक्ति नही होती। इस प्रकार गौतम स्वामी भगवान् महावीर के समवसरण की ओर जाते हुए देवताओ को देखकर बात करने के लिये अपने परिवार सहित नही जाते तो उन्हे भी चारित्र धर्म प्राप्त नही होता और आज विद्यमान त्रिपदी के आधार पर शास्त्र रचना भी नही होती और न गौतम स्वामी को केवलज्ञान होता। आज भी ससार मे विशिष्ट लोगो के लिये आडम्बर होता ही है।

(2) कुछ लोग इन पूजाओ के बारे मे आरोप लगाते हैं कि पूजाए शास्त्र मे नही है। ज्ञाता धर्म कथा सूत्र मे द्रौपदी ने भगवान् जिनेश्वरदेवी की पूजा की। वहाँ पर नमुत्थुण का पाठ है। द्रौपदी ने कामदेव की पूजा नही की है किन्तु जिनेश्वर भगवान् की ही पूजा की है इस सबध मे रायपसेणी जिवाभिवम् वृहत् कल्प भगवती आदि मे जिनेश्वर देव की पूजा का स्पष्ट उल्लेख है।

(3) पूजाओ के द्वारा भगवान् को नमस्कार होता है। कुछ लोग चमत्कार मे नमस्कार मानते है। इन पूजाओ के रचयिता पूज्य पडित वीर विजयजी महाराज भी हैं। इनके समय मे एक गू गा जो बोल नही सकता है वह भी इन पूजाओ मे आह्लाद पाने पर गुनगुनाने व बोलने लग गया। यह पूजाओ का प्रत्यक्ष चमत्कार है। ☐

प्राचीन व अर्वाचीन श्रावस्ती

• नवीन भण्डारी

☐ यह कल्याणक भूमि है। यहाँ पर तीसरे तीर्थंकर सम्भवनाथ भगवान् के चार कल्याणक हुए हैं—च्यवन, जन्म, दीक्षा व केवलज्ञान। श्रावस्ती के महाराजा जितारी व सेना-माता के पुत्र भगवान् सम्भवनाथ थे और इन्हीं भगवान् के कल्याणकों के निमित्त यह तीर्थ प्रसिद्ध है।

आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व श्रावस्ती नगर इतिहास प्रसिद्ध था। इसमें तीन संस्कृतियाँ विद्यमान थी। वैदिक संस्कृति, बौद्ध संस्कृति तथा श्रमण (जैन) संस्कृति, यह नगरी इन तीनों संस्कृतियों का केन्द्र मानी जाती थी। उस समय अनेक गण-राज्य थे।

यह वर्तमान उत्तर प्रदेश के वहराइच जिले में गोंडा से 44 किलो मीटर के दूरी पर विद्यमान है तथा यह वलरामपुर से 16 किलो मीटर की दूरी पर है।

प्राचीन काल में इसका वर्णन कई स्थानों पर मिलता है। अनेक जैनागमों में इसका वर्णन मिलता है।

रायपसेणी सूत्र इस नगर से पूर्ण सम्बन्धित है। यह उपांग ग्रंथ है। यहां का परदेशी राजा [illegible] था। उसका जैन-धर्म में बिल्कुल विश्वास नहीं था। वह आत्मा की नित्यमानता नहीं मानता था इसलिये वह अत्यन्त पापकर्म में लगा हुआ था। शिकार खेलना आदि जीव हिंसा में वह पाप नहीं मानता था। ऐसे समय में वहाँ पर पार्श्वनाथ भगवान् के श्रवण केशी कुमार पधारे। राज आज्ञा से उनको नगर में प्रवेश नही करने दिया गया और अपमान किया गया। इन सारी घटनाओं से उसका मंत्री चित्रसारथी जो श्रमण संस्कृति का उपासक था, उनको अत्यन्त दुःख हुआ। जनता के द्वारा बाजारों में राजा की निंदा होने लगी। इससे चित्रसारथी ने राजा को समझा कर केसी कुमार श्रमण को निमंत्रण देकर बुलवाया। राजा ने अनेक प्रश्न करके अपने आपको निरुत्तर समझ कर आत्मा की नित्यमानता को स्वीकार कर जैन धर्म का उपासक बनकर श्रावक के बारह व्रत अंगीकार किये। इसमें उनकी धर्मपत्नी सूर्यकान्ता ने राजा को धर्म छोड़ने के लिए कहा। नहीं मानने पर एक दिन राजा को जहर का प्रयोग कर दिया। [illegible]

बाद भगवान् महावीर के सम्मोशरण मे आकर अनेक प्रकार से भक्ति की। वह देव-लोक मे सूर्यति नाम देव हुए। इसका वर्णन राय पसेणी सूत्र मे मिलता है।

यही पर गौतम गणधर व केसी कुमार श्रमण का सम्वाद हुआ था। उस सम्वाद मे गौतम गणधर ने पाँच महाव्रत व केसी श्रमण ने चार महाव्रत के बारे मे सम्वाद हुए और अन्त मे केसी श्रमण ने पाँच महाव्रत की आज्ञा स्वीकर की। मन्दिर मे दोनों की प्रतिमा विराजमान की गई हैं।

यहाँ पर भगवान् महावीर ने एक चातुर्मास भी किया। यहाँ पर महात्मा बुद्ध व भगवान् महावीर का मिलना भी हुआ। इसी स्थान पर महात्मा बुद्ध ने एक खूखार अगुलिमाल डाकू को उपदेश देकर अपना शिष्य बनाया। यह अगुलिमाल महाराजा प्रसेनजीत के समय मे हुआ। अगुलिमाल का पहला नाम अहिंसक था। यह तक्षशिला मे अपने आचार्य गुरु का सबसे प्यारा विद्यार्थी था। उसे वहाँ के विद्यार्थी बहुत झगडते व सताते थे। वह बहुत बलवान था। वह किसी से डरता नही था। सताए जाने पर वह उससे बदला लेने पर उतारू होता था। इससे वह हिंसक कहलाने लगा और वह अपने सताए जाने वाले सहपाठियो को इतना पीटता था कि वह लहूलुहान हो जाते थे। अत मे गुरु ने उसे काबू मे लाने के लिये एक तरकीब सोची। शिक्षा पूरी होने पर उन्होंने अहिंसक को बुलाकर कहा—बेटा मुझे क्या गुरु दक्षिणा दोगे ? अहिंसक हाथ जोडकर बोला—जो आज्ञा करोगे पूरी करुगा। गुरु बोले—तुम मुझे गुरु दक्षिणा के रूप मे एक ऐसी माला भेंट करोगे जिसमे अगुलिया गूथी हुई हो। इस तरह से जगल मे जाने वाले राहगीरो मे जो मिलता था, उसे मार कर उसने नौ सौ निन्नानवे अगुलियो की माला बनाकर पहन ली। एक दिन और कोई रास्ते मे नही मिल कर उसकी माता मिली। उसे देख कर उसने हत्या का विचार छोडा। उसके बाद रास्ते मे महात्मा बुद्ध मिले, वह उनके पीछे भागा। भगवान् बुद्ध ने समझा कर उसे बौद्ध भिक्षुक बना दिया। उस अगुलिमाल के मकान के अवशेष अब भी वहाँ मौजूद है। कई उद्यान और कई प्राचीन मदिरो आदि से यह नगरी सुशोभित थी। भगवती सूत्र मे श्रावस्ती निवासी शख श्रवक की जिज्ञासा पर भगवान् महावीर ने पौषध के बारे मे बताया है।

कालान्तर मे यह नगर तापती व घाघरा नदियो की बाढ मे विलीन होकर नष्ट प्राय हो गया था। उसमे सारी सस्कृतियो की ऐतिहासिक सामग्रियाँ प्राय नष्ट हो गई। चीन से आये हुए बौद्ध यात्री फाईयान ने भी अपनी भारत यात्रा मे इस नगरी का वर्णन किया है। श्वेताम्बर जैनियो के मान्य, अजित शाति मे भी श्रावस्तीपुर का सुन्दर वर्णन है।

यह कल्याणक भूमि है। यहाँ पर तीसरे तीर्थंकर सम्भवनाथ भगवान् के चार कल्याणक हुए हैं—च्यवन, जन्म, दीक्षा व केवलज्ञान। श्रावस्ती के महाराजा जितारी व सेना माता के पुत्र भगवान् सम्भवनाथ थे और इन्ही भगवान् के कल्याणको के निमित्त यह तीर्थ प्रसिद्ध है। इस तीर्थ का जीर्णोद्धार करना बहुत आवश्यक हो गया जब उत्तर प्रदेश मे पुराना शोध खोज मे इसके अवशेष मिले और एक मदिर मे मिली उसकी प्रतिमाएँ लखनऊ सग्रहालय

में चली गई। इस सारी परिस्थिति में श्री सुरेन्द्रसिंहजी लोढ़ा ने प्रयत्न कर अनेक आचार्यो, मुनिवरों तथा साध्वीजी से इस तीर्थ के उद्धार के लिये प्रार्थना की। सन् 1974 महावीर निर्वाण सम्वत् 2500 में श्री सुरेन्द्रसिंहजी लोढ़ा—आगरा निवासी ने परम पूज्य जैन आचार्य श्री विजय भद्रंकर सूरिजी महाराज व मुनि मण्डल के सामने श्रावस्ती तीर्थ का इतिहास बताकर वहाँ व्याख्यान में चतुर्विध संघ के समक्ष तीर्थोद्धार के लिये आह्वान किया। इसी के फलस्वरूप पूज्य आचार्य देव ने इस तीर्थ को पुनः प्रसिद्धि में लाने के प्रयास शुरू किये। इस मन्दिर के निर्माण हेतु एक जीर्णोद्धार कमेटी श्री माणकचंदजी बेताला, मद्रास वालों की अध्यक्षता में निर्माण हुई। श्री लक्ष्मीचंदजी कोठरी, श्री केवलचंदजी खटोड़, श्री हिम्मतमलजी संघवी आदि के कठोर परिश्रम से श्री सम्भवनाथ भगवान् जिनालय का निर्माण हुआ। इसमें परिकर युक्त 51 ईंची नई मूर्ति का निर्माण रणजीतसिंहजी भण्डारी साहब के सहयोग से लल्लूप्रसादजी शर्मा मूर्तिकार ने की। इसके साथ अन्य 8 प्रतिमाएँ भी बनाई गयी। जिनालय जमीन से 51 फुट ऊंचा है। इसमें भोजन शाला, धर्मशाला व औषधालय का निर्माण हो चुका है। परम् पूज्य आचार्य भगवन्त विजय भद्रंकर सूरी जी तथा आचार्य पुण्यानंद सूरी जी आदि मुनि मण्डल तथा साध्वीजी आत्मयशा श्रीजी आदि साध्वी मण्डल की निश्रा में अंजनशलाका प्रतिष्ठा महोत्सव 27 अप्रेल, 1987 को प्रारम्भ होकर 5 मई, 1987 को सम्पन्न हुआ। इसमें मद्रास, बैंगलोर, बहराइच, लखनऊ, कानपुर, जयपुर, आगरा आदि शहरों से संघ के प्रतिनिधि आये। इसके साथ भी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण जो कि श्रावस्ती के पास रहते थे, आये। परम पूज्य अरुणप्रभ विजयजी, श्री वारीषेण विजयजी और वीरसेन विजयजी को आचार्य पद प्रदान किया गया। इन पांचों आचार्यो की निश्रा में प्रतिष्ठा बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुई। □

श्रद्धांजलि

1. श्री प्रेमचन्दजी वैद
2. श्री शान्तीमलजी भण्डारी
3. श्री मोहनलालजी चोरडिया
4. श्री जयन्तीलालजी गगल भाई
5. श्री पन्नालालजी सुराना
6. श्री राजेन्द्रकुमारजी गोलेच्छा
7. धर्मपत्नी श्री भगवानदासजी पल्लीवाल
8. मातुश्री श्री शान्तीलालजी बाफना
9. मातुश्री श्री कुशलराजजी सिंघवी
10. श्रीमती पगी बहन
11. श्रीमती किरण बाई

उपरोक्त सभी समाज के प्रमुख एवं धर्मनिष्ठ सदस्य थे। तपागच्छ संघ उनके निधन पर हार्दिक दुःख प्रगट करता है एवं शासन देव से प्रार्थना करता है कि सभी दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करें।

संस्कृति की सौरभ हवा मे उड़ती जा रही है

आशीषकुमार जैन

आर्य सस्कृति की सौरभ हवा मे उडती जा रही है। कहाँ तो हमारे स्वर्णांकित इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठ, कैसा वर्तमान और भावी की कल्पना मात्र से मन सिहर उठता है।

अनेकानेक ऋषियो, महर्षियो एव महापुरुषो की चरणरज से अतिपावन भारत देश की पुण्यशाली प्रजा अपना गौरव क्यो खोती जा रही है ? सकल विश्व को जहाँ से अहिंसा, अनेकान्त का दिव्य सदेश मिला, जहाँ से तप, त्याग, सयम की सुरसरि प्रवाहित हुई वहाँ भौतिकवाद की मृगतृष्णा मे आज का जन-जीवन अस्त-व्यस्त एव सत्रस्त दिखाई पडता है। विनाश से भी बदतर विकास का दम भरते हुए सस्कृति के प्रहारक तत्त्वो को हम नि सकोच अपना रहे हैं। आर्य सस्कृति की सौरभ हवा मे उडती जा रही है। कहाँ तो हमारे स्वर्णांकित इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठ, कैसा वर्तमान और भावी की कल्पना मात्र से मन सिहर उठता है।

हमारी मानसिकता, विचार शक्ति कु ठाग्रस्त हो गई है। पश्चिम के प्रभाव से हमारे आचार-विचार, आहार-विहार, रुचि, मनोवृत्ति वेशभूषा मे तेजी से आया परिवर्तन हमे सास्कृतिक पतन की ओर धकेल रहा है। अग्रेजो द्वारा हम पर थोपी हुई अग्रेजियत विकराल रूप धारण कर आर्य सस्कृति की अस्मिता के लिए चुनौती बन कर खडी है।

अधाधुन्ध बढते विज्ञान के इस युग मे सारा वातावरण ही बदल गया है। स्वाभिमान को त्याग कर हम परमुखापेक्षी बन गये हैं। अतिशय समृद्ध भारतीय ज्ञान-विज्ञान को उपेक्षित कर हमारा झुकाव विदेशी विज्ञान की तरफ अधिक होने से हमारी श्रद्धा भ्रष्ट हुई नास्तिकता को प्रोत्साहन मिला। नास्तिकता के कारण फैला सास्कृतिक प्रदूषण हमे समस्त सद्प्रवृत्तियो एव सद्गुणो से रहित कर कुमार्ग की ओर अग्रसर कर रहा है।

हमारा खान-पान-परिधान, जीवन व्यवहार सभी अग्रेजीकरण की भेंट चढ चुका है। भक्ष्याभक्ष्य, पेय-अपेय का भान भूलकर शुद्ध, स्वास्थ्यवर्धक भोजन का स्थान असात्विक भोजन ने ले लिया है। सदाचार, शील

आदि गुणों को तिलाञ्जलि देकर वेशभूषा दिन प्रतिदिन उद्‌भट् हो रही है। भारत के मधुर गीत-भजनों को छोड़ हम पॉप संगीत (Pop Music) सुनना पसन्द करने लगे हैं। सर्वस्व लूट कर नि.सत्व करने वाली फीचर फिल्मों के कारण देश का फ्यूचर अंधकारमय दिखाई पड़ता है। हमारी बुद्धि का दिवा-लियापन इससे और अधिक क्या हो सकता है कि हम संस्कृति का ह्रास कर स्वयं को सुसंस्कृत समझ कर प्रसन्न होते हैं।

सभ्य, सुशिक्षित जैन समाज में पाश्चात्य विकृति तेजी से पनपी है और जैनत्व से ही दूर करती जा रही है। युवा पीढ़ी तो पूर्ण रूप से इस प्रवाह में बह चुकी है। सर्वोपरि भारतीय संस्कृति की महानता, विशालता, व्यापकता एवं उपादेयता को प्रचारित कर पतन के गर्त पर खड़ी आज की पीढ़ी को मर्यादित करने के लिए हम यदि सजग नही हुए तो परिणाम के रूप में पश्चात्ताप के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रहेगा।

पूर्व के सुदृढ़ हिमालय को पश्चिम के तूफानी थपेड़ों से हिलने न दें। पूर्वजों का नाम रोशन नहीं तो कम से कम कलंकित न करें। अंधानुकरण को आधुनिकीकरण समझ बहुत धोखा खाया है परन्तु पश्चिम की चका-चौंध में हम और भ्रमित नही होंगे, इस दृढ़ संकल्प के साथ भारतीय संस्कृति का रक्षण-पोषण करते हुए आत्मोन्नति का सुमार्ग प्रशस्त करें। इसी शुभ भावना के साथ—

□ □ □

सुन्दर विचार

अपनी सरकार के पास जीवों को मारने के लिए योजनायें एवं पैसा है परन्तु जीने के लिए कुछ भी नही है। खून की लक्ष्मी से कोई देश आबाद हुआ है क्या ?

× × × ×

रावण अथवा सिकन्दर जैसे व्यक्तियों की लक्ष्मी उनके साथ नहीं गई। इसी तरह धन-दौलत, वैभव किसी के साथ जाने वाला नही है। आत्मा अकेली आई है एव अकेली ही जायेगी, यह बात कटु सत्य है एवं सरल भी लेकिन [illegible] में उतारनी [illegible] कठिन है।

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल

की

वार्षिक गतिविधियाँ

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल ने विगत वर्ष मे अनेक शासन प्रभावना के कार्य किये। जिसमे विशेष उल्लेखनीय कार्य गत वर्ष पू मुनि श्री नित्यवर्द्धन सागरजी म एव वालमुनि श्री धर्मयश सागरजी म सा की सान्निध्यता मे वालको के जीवन मे सस्कार सृजन के लिए आयोजित समूह सामायिक हर रविवार को अपना रचनात्मक सहयोग प्रदान कर कायक्रम को सफल वनाया। 5 दिवसीय सस्कार अध्ययन सत्र मे भी पूर्ण सहयोग प्रदान किया। 64 प्रहरी पौपध करने वालो को शाल ओढा कर वहुमान किया गया।

जिनालय मे सम्पूर्ण व्यवस्था के साथ वाद्ययन्त्रो के सामूहिक रूप मे होने वाले स्नात्रोत्सव तो जन-जन के लिए लोकप्रिय वन गया। यह सव मण्डल के युवा कार्यकर्ताओ के सक्रिय सहयोग एव उत्साह के कारण प्रभु भक्ति का अनूठा कार्य हुआ है।

अन्य जिन मन्दिरो के वार्षिकोत्सव मे भी अपना सहयोग देना पुनीत कर्तव्य समझ कार्य मे जुट जाते हैं। श्री सीमन्धर स्वामी जिनालय जनता कॉलोनी, शान्तिनाथ भगवान का मन्दिर चदलाई, श्री ऋषभदेव भगवान का मन्दिर-वरखेडा, चन्द्रा-प्रभु भगवान का मन्दिर जोवनेर, मुनिसुव्रत स्वामी जिनालय मालपुरा, चन्द्रा प्रभु भगवान का मन्दिर आमेर, के वार्षिकोत्सव पर वस व्यवस्था एव सुपार्श्वनाथ भगवान के मन्दिर 'खोह' मे होने वाले प्रतिष्ठा महोत्सव मे जवाहर नगर मे प्रतिष्ठा महोत्सव मे भोजन व्यवस्था मे सहयोग देना आदि, सुश्री 'वेला भडारी' एव श्रीमती 'अनीता भडारी' के दीक्षा के अवसर पर आयोजित वरघोडा पडाल व्यवस्था एव साधर्मिक वात्सल्य आदि व्यवस्था मे सहयोग देकर आयोजन को सफल वनायें।

यात्रा की भावना सदैव होने के कारण मण्डल के सभी कायकर्ताओ की भावना श्री राजस्थान की वसुन्धरा पर चवलेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ जिसका स्तवन काफी समय से सम्पूर्ण भारत के कोने-कोने मे विख्यात है। ऐसे तीर्थ की यात्रा अवश्य करनी चाहिये इसी उद्देश्य से पर्युषण महापर्व की पावन पूर्णाहुति के अवसर पर काफी उत्साह से ले जाने की थी लेकिन प्रकृति की अनुकूलता न होने, पानी आदि का विशेष प्रवाह चालू होने से यह भावना उस वक्त साकार नही हो पायी। अत मण्डल के कार्यकर्ताओ की भावना होली चातुर्मास के तत्काल पश्चात्

ऐसे तीर्थ पर जाने का निश्चित संकल्प किया। तदनुसार चैत्र वद 7 को सायं यहाँ से बस द्वारा रवाना होकर जहाजपुर में जिन दर्शन चैत्यवंदन कर पन्डेर होते हुए चैनपुरा पहुँचे। जहाँ सामायिक प्रतिक्रमण नवकारशी (नाश्ता) 'गोलेच्छा ग्रुप जयपुर' के गेस्ट हाउस पर कर बस द्वारा जय-जयनाद करते प्रभु भक्ति में तल्लीन वाद्य यन्त्रों के साथ प्रभु भक्ति के गीत गाते तलेटी चवलेश्वर पहुँचे। वहाँ से सिढ़ियाँ चढ़ना प्रारम्भ किया, सभी कार्यकर्ता पूजा के वस्त्रों में ऐसे लग रहे थे कि भक्ति का सागर उमड़ आया हो। तीर्थ स्थल पर पहुँच कर जयजय का नाद गुंजायमान कर रहा था। वहाँ पर दिगम्बर बन्धुओं के व्यवधान के कारण प्रभु प्रतिमा की अंग पूजा का अहोभाग्य हमें मिलने से रहा। अग्र पूजा व भाव पूजा अत्यधिक आत्मविभोर कर रही थी।

बाद में भोजन कर पन्डेर शाहपुरा होते हुए विजयनगर पहुँचे। जहाँ पर गगनचुम्बी विशाल शिखरयुक्त भव्य रचनात्मक जिनालय में विराजित श्री देवाधिदेव श्री सम्भवनाथ भगवान के दर्शन कर हर्षोल्लासित हुए जहाँ विशाल कार्य कलात्मक तोरण द्वारा युक्त प्रवेश द्वार पर हुई कला के निरीक्षण से ऐसा लगता है जैसे देवविमान स्वरूप जिनालय हो। सब के मन प्रसन्नता से खिल उठे। सार्धमिक भक्ति का लाभ विजयनगर संघ ने लिया। बधाई एवं आरती करके वहाँ से रवाना होकर जयपुर पहुँचे।

जयपुर शहर में बना शताधिक वर्ष प्राचीन "आदिनाथ जिनालय' का शास्त्रोक्त शिखर बद्ध जिनालय में पुनः प्रतिष्ठा कराने हेतु महा महोत्सव हुआ जिसकी व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व मंडल परिवार पर रहा— जिसमें प्रचार-प्रसार एवं जुलूस व्यवस्था, भोजन व्यवस्था, आवास व्यवस्था, सार्धमिक वात्सल्य व्यवस्था, उपाश्रय उद्घाटन, पुस्तक विमोचन आदि समारोह को सफल बनाने में सहयोग प्रदान किया।

राजस्थान जैन संघ द्वारा आयोजित अधिवेशन में मंडल के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिनालय मालवीय नगर कल्याण कॉलोनी में गत श्रा. सुद 10 बुधवार को जिन बिम्बों का नूतन जिनालय में भव्य प्रवेश जुलूस आदि की व्यवस्था में सहयोग देकर कार्यक्रम को सफल बनाया।

अन्त में मंडल परिवार अपने सेवाभावी कार्यक्रमों के संचालन में वर्ष में जिन-जिन का भी सहयोग प्राप्त हुआ है। उन सब को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से धन्यवाद देता है।

जय वीर !

ललित कुमार दुगड़
महामंत्री

□ □ □
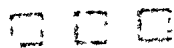
श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर महासमिति द्वारा अनुमोदित वार्षिक कार्य विवरण सन् 1989-90

प्रस्तुतकर्ता—नरेन्द्रकुमार लुणावत
सघ मत्री

परम आदरणीय साध्वीश्री प्रिय दर्शना श्रीजी महाराज साहब अन्य उपस्थित साध्वी-गण, उपस्थित सावर्मी बुजुर्गो, माताओ, भाइयो, बहिनो एव साथियो !

आज भगवान् महावीर के जन्म वाचना दिवस पर हमारे सघ श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर का वर्ष 1989-90 का कार्य विवरण आय-व्यय सहित सघ की महासमिति की ओर से प्रस्तुत करते हुए मुझे अति प्रसन्नता है ।

विगत चातुर्मास

विगत चातुर्मास अपने यहाँ पर आदरणीय पूज्य तपस्वी मुनिराज श्री नित्य वर्द्धन सागरजी महाराज साहब तथा बाल-मुनि श्री धर्मयश सागरजी म सा का सानद सम्पन्न हुआ। आपके चातुर्मास काल मे पर्युषण पूर्व की जो आराधनाएँ हुई उनका विवरण आपके समक्ष पिछले वर्ष की रिपोर्ट मे प्रस्तुत किया जा चुका है। उसके बाद आप दोनो म सा की निश्रा मे पर्युषण पर्व बडे आनन्द एव उल्लास पूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुए।

पर्युषण काल मे तपस्वी मुनिराज श्री नित्यवर्द्धन सागरजी ने दानपुर (डूगरपुर) के मदिर व उपाश्रय के निर्माण हेतु एक योजना सघ के सम्मुख रखी जिसके फलस्वरूप इस कार्य के लिए लोगो ने बडी उदारता से राशि लिखवाई। इस कार्य के लिए श्री तपागच्छ सघ की ओर से भी 11,000) रु० देने का निश्चय किया गया। इसके अतिरिक्त करीबन 16,000) रु० की मूर्तियाँ भी सघ के कई भाग्यशालियो ने खरीद कर इस मदिर के लिए भेंट दी।

पर्युषण काल मे ही बालक-बालिकाओ मे धार्मिक शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु एक विशेष कोष भी बालमुनि की प्रेरणा से स्थापित किया गया जिसमे भी लोगो ने बडी उदारता से करीबन 25,000) रु० की राशि लिखवाई जिसमे से 16,731) रु० प्राप्त हो चुके हैं। जन्म वाचना के दिन मणिभद्र का 31वा पुष्प पूज्य मुनिराज

श्री नित्यवर्द्धन सागरजी महाराज साहब को समर्पित किया गया। स्वप्नों की बोलियाँ भी बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ बोली गई और जन्म की प्रभावना एक सद्गृहस्थ की ओर से की गई। अतः महासमिति उनका तथा स्वप्नों की बोली बोलने वालों का आभार व्यक्त करती है।

तपस्वी मुनि राज श्री नित्यवर्द्धन सागर जी तथा वयोवृद्ध अगेवान श्रावक श्री रणजीतसिंहजी भंडारी के पूजाओं की हिन्दी पुस्तक की कमी की ओर ध्यान आकर्षित करने पर संघ के श्रावक श्री सरदारमलजी लूनावत द्वारा विविध पूजा संग्रह नाम की पुस्तक छपाकर भारत के विभिन्न संघों को निःशुल्क भेंट की गई है।

आसोज माह की ओलीजी की आराधना भी सानन्द सम्पन्न हुई। बालमुनि की विशेष प्रेरणा से जयपुर के बालकों में विशेष धार्मिक जागृति रही तथा दिनांक 1 नवम्बर, 1989 से 5 नवम्बर, 1989 तक एक धार्मिक संस्कार सत्र का भी आयोजन रखा गया जिस में करीब 50 बालकों ने भाग लिया। इस सत्र में परीक्षा भी आयोजित की गई एवं अन्त में पारितोषिक वितरण समारोह भी हुआ एवं विशेष योग्यता वाले बालकों को विशेष पारितोषिक भी दिये गये।

दीपावली का व्याख्यान तथा दूसरे दिन की आराधना भी पू. म. सा. की निश्रा में बड़े उत्साह से सम्पन्न हुई अन्त में कार्तिक पूर्णी पूनम को सिद्धाचलजी के भेंट वंदन करने के बाद दोनों मुनिराज चातुर्मास परि-वर्तन हेतु श्रीमान् सरदारमलजी लूनावत के निवास स्थान पर पधारे जहाँ उनका मांगलिक प्रवचन हुआ और गुरु पूजा भी की गई इस प्रकार चातुर्मास पूर्ण हुआ तब फिर दोनों महाराज साहब ने जयपुर से विहार कर दिया।

विगत चातुर्मास बाद की प्रमुख घटनाएँ

ऋषभदेव भगवान् मन्दिर की प्रतिष्ठा :

श्री ऋखबदेव भगवान् मन्दिर ट्रस्ट ने जयपुर स्थित आगरे वाले नये मन्दिर का जिर्णोद्धार कराकर इस मंदिर को अब बड़ा भव्य एवं शिखर बद्ध मन्दिर बना दिया है। इस मंदिर के मूलनायक श्री ऋखबदेव भगवान् तथा अन्य भगवानों की पुनः प्रतिष्ठा कराने हेतु परम पूज्य आचार्य भगवन्त श्री रामचन्द्र सूरि महाराज साहब की आज्ञा से तपस्वी पू. मुनिराज श्री जिन-सेन विजयजी तथा प्रवचनकार मुनिराज श्री रत्नसेन विजयजी महाराज साहब जयपुर पधारे। पू. मुनिराज रत्नसेन विजयजी महाराज साहब के आत्मानन्द सभा भवन में करीब 25 दिन तक बड़े ही ओजस्वी एवं शिक्षा प्रद प्रवचन हुये जिसका लोगों ने खूब लाभ लिया। आप दोनों मुनि-राजों की निश्रा में ही प्रतिष्ठा के शुभ अवसर पर 9 दिन तक बड़े ठाठबाट से अठाई महोत्सव दिनांक 22-4-90 से 30-4-90 तक सानन्द सम्पन्न हुआ। अन्त में दिनांक 30-4-90 को देवाधिदेव ऋषभ-देव भगवान् एवं अन्य भगवानों की प्रतिष्ठा बड़े ही उत्साह एवं उमंगपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुई। इस अवसर पर महासमिति की ओर से पू. म. सा. को कामली भी वोहराई गई।

नवीन उपाश्रय का निर्माण एवं उद्घाटन समारोह :

[illegible]

हो रहे नवीन तपागच्छ उपाश्रय का कार्य भी मदिर की प्रतिष्ठा के समय करीव-करीव पूरा हो चुका था अत इस महोत्सव के साथ ही दिनाक 29-4-90 को इसका भी विधिवत् उद्घाटन श्रीमान् सेठ निहाल चन्दजी साहव नाहटा तथा उनकी धर्मपत्नी के कर-कमलो द्वारा वडे उत्साह पूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुआ। जिसमे काफी अच्छी सख्या मे सघ के भाई वहिनो ने भाग लेकर इस समारोह को सफल वनाया। इसी दिन पूज्य मुनिराज रत्नसेन विजयजी महाराज द्वारा लिखित तीन पुस्तको का ग्रथ विमोचन समारोह भी माननीय श्री भँवरलालजी शर्मा, स्वायत शासन मत्री, राजस्थान, श्री दौलतमलजी भँडारी भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, राजस्थान एव श्री हीराचन्दजी वँद, प्रसिद्ध समाज सेवी के द्वारा किया गया। इस समारोह के मुख्य अतिथि श्रीमान् एस आर भन्साली, विधि सचिव, राजस्थान सरकार थे। तपागच्छ सघ की ओर से उपाश्रय उद्घाटन समारोह के अवसर पर साधर्मी वात्सल्य का भी आयोजन किया गया।

प पू भद्रकर विजयजी म सा की पुण्य तिथि

अध्यात्म योगी पूज्य पन्यास प्रवर श्री भद्रकर विजयजी गणिवर्य की 10वी पुण्य तिथि दिनाक 8 मई, 1990 को पूज्य मुनिराज जिनसेन विजयजी तथा रत्नसेन विजयजी महाराज साहव की निश्रा मे वडे धूमधाम से मनाई गई। इस दिन एव सद्गृहस्थ की ओर से सामूहिक आयबिल की आराधना तथा भक्तामर महापूजा का आयोजन भी किया गया।

राजस्थान जैन सघ के सम्मेलन मे प्रतिनिधित्व

दिनाक 9 व 10 जून, 90 को देलवाडा आबू मे राजस्थान जैन सघ सस्थान की ओर से एक सम्मेलन सेठ श्रेणिक भाई के सभापतित्व मे आयोजित किया गया जिसमे जयपुर सघ के 50 भाई वहिनो ने एक वस द्वारा वहाँ जाकर सघ की ओर से भाग लिया। इस यात्रा काल मे देलवाडा के जगत् प्रसिद्ध मदिरो के दर्शन व पूजा के अलावा अचलगढ, राणकपुर, मुच्छाला महावीरजी राता महावीरजी तथा जीरावला पार्श्वनाथ, माडोली, जालौर आदि तीर्थो की यात्रा का लाभ भी यात्रियो को मिला।

वर्तमान चातुर्मास

पिछले चातुर्मास समाप्त होते ही दिसम्वर 1989 मे आगामी चातुर्मास की विनती करने हेतु सघ के उपाध्यक्ष श्री मदनराजजी सिघवी तथा सघ मत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत पूज्य आचार्य भगवन्त श्री सुशील सूरीश्वरजी महाराज साहब के पास मेडता रोड गये। पूज्य आचाय भगवन्त ने जयपुर मे चातुर्मास करने की विनती को मान देकर पुन सोजत रोड प्रतिष्ठा के समय सम्पर्क करने को कहा। अत दिनाक 13 1 90 को पुन सघ के उपाध्यक्ष श्री मदनराजजी सिघवी, सघ मत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, मन्दिर मत्री श्री खीमराजजी पालरेचा, मनोहरमलजी लूणावत तथा पुखराजजी जैन सोजत पूज्य आचाय महाराज के पास चातुर्मास की विनती करने गये। लेकिन विचार विमश के अन्त मे पू आचाय म सा ने इस वर्ष चातुर्मास विशेष कारण से जयपुर मे करने की अपनी असमर्थता प्रकट की। इसके वाद पू आचार्य प्रदयोतन सूरीजी महाराज साहव

के शिष्य जिनसेन विजयजी तथा रत्नसेन विजयजी म. सा. जो आगरे वाले मंदिर की प्रतिष्ठा कराने हेतु जयपुर आने वाले थे उनको जयपुर चातुर्मास करने की विनती करने सर्वश्री चिन्तामणिजी ढढ्ढा तथा संघ मंत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत एवं उपाश्रय मंत्री राकेशकुमारजी मोहनोत एवं गुणवंत-मलजी सांड गोधन, जिला जालोर गये लेकिन उनका भी पिंडवाडा में चातुर्मास लगभग फाइनल हो जाने से उनके आचार्य भगवन्त ने इसके लिए अपनी असमर्थता प्रकट की ।

इसके बाद परमपूज्य आचार्य जितेन्द्र सूरीजी म. सा. को विनती करने हेतु संघ मंत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, विमलकान्तजी देसाई, राकेशकुमार मोहनोत, विमलकुमार लूणावत एवं पुखराजजी जैन कांकरोली (दयाल शाह के किले) गये लेकिन आपने भी दूसरी जगह चातुर्मास लगभग फाइनल हो जाने से जयपुर चातुर्मास करने में असमर्थता प्रकट की ।

इसके बाद चातुर्मास की विनती परम पूज्य आचार्य भगवन्त श्री ह्रींकार सूरीजी म. सा. को उपाश्रय मंत्री राकेशकुमार मोहनोत, विमलकुमार लूणावत एवं नरेन्द्र-कुमारजी कोचर ने नागेश्वर तीर्थ जाकर की । आचार्य महाराज ने जयपुर चातुर्मास करने का आश्वासन दिया एवं पुनः शीघ्र ही सम्पर्क करने को कहा । पुनः संघ मंत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, ज्ञानचन्दजी भण्डारी, भंवरलालजी मूथा तथा नरेन्द्रकुमारजी लूणावत नागेश्वर तीर्थ चातुर्मास की पुनः विनती हेतु गये । इस पर पूज्य आचार्य भगवन्त ने जयपुर चातुर्मास करने का पूर्ण आश्वासन दिया लेकिन चातुर्मास की जय बुलाने हेतु पुनः नागेश्वर तीर्थ पर प्रतिष्ठा के समय दिनांक 4.5.90 को आने को कहा । तदनुसार प्रतिष्ठा के मौके पर संघ मंत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, उपाश्रय मंत्री राकेश-कुमार मोहनोत, मन्दिर मंत्री खीमराजी पालरेचा एवं ज्ञानचन्दजी भण्डारी नागेश्वर तीर्थ गये और वहां आचार्य भगवन्त ने आगामी चातुर्मास जयपुर में करने की संघ की विनती को स्वीकार कर लिया एवं जयपुर चातुर्मास की जय भी बुलवा दी गई ।

इसके अतिरिक्त आचार्य भगवन्त के समक्ष यह भी तय हुआ कि विहार हेतु डोली वालों का इन्तजाम कर दिया जायेगा जिसमें रतलाम वाले भाई डोली उपलब्ध कराने में सहयोग कर देंगे तथा विहार में साथ रहने के लिए जयपुर से रमेश जैन को भेज दिया जायेगा । तदनुसार रमेश जैन को दिनांक 19.5.90 को भेज दिया गया और फिर आचार्य म. सा. ने डोली में तथा उनके एक शिष्य ने पैदल नागेश्वर तीर्थ से जयपुर चातुर्मास हेतु विहार कर दिया एवं [illegible] तीर्थ आ गये जो करीब नागेश्वर से 50 किलोमीटर है । लेकिन वहां एक डोली वाले के कुछ अस्वस्थ होने से आगे विहार न हो सका और अन्त में महाराज साहब ने दोनों डोली वालों को वापस भेज दिया और रमेश जैन को भी कहा कि तुम भी जयपुर चले जाओ । ऐसी स्थिति में रमेश जैन के वापस आने पर जयपुर संघ ने तुरन्त ही सर्वश्री [illegible] शाह [illegible] एवं ज्ञान-चन्दजी भण्डारी एवं रमेश जैन को [illegible] तीर्थ आचार्य भगवन्त के पास भेजा ।

वहां पर पूज्य आचार्य म. सा. ने विहार हेतु दूसरे डोली वाले [illegible]

से भेजने को कहा । अत शीघ्र ही सम्पतलालजी मेहता को डोली वालो की व्यवस्था हेतु भेजा गया जिन्होने बीजापुर, राता महावीरजी, तखतगढ, शिवगज, सिरोही, चान्दराई आदि जगह जाकर डोली वालो की व्यवस्था के लिए कार्यवाही की लेकिन कोई भी डोली वाले आने को तैयार नही हुये । अन्त मे सम्पतमलजी ने आबू पवत जाकर सघ मत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, जो उस समय श्री राजस्थान जैन सघ के सम्मेलन मे भाग लेने गये हुए थे, से सम्पर्क किया और सारी स्थिति उन्हे बतलाई ।

आबू पवत पर जानकारी करके सघ मत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत सम्पतमलजी मेहता को साथ लेकर अचलगढ गये एव वहां से 4 डोली वालो को सम्पतमलजी मेहता के साथ पडासली तीर्थ भेजा ताकि दो-दो आदमी डबल शिफ्ट मे आचाय म सा को जयपुर विहार करा कर शीघ्रातिशीघ्र ला सके । जब 4 डोली वालो को लेकर सम्पतमलजी पडासली पहुँचे तो आचार्य म सा ने उनके वहाँ पहुँचने पर कहा कि मेरे तो अठाई शुरू हो गई है तथा पडासोली तीर्थ के आगेवानो ने चातुर्मास यहा ही करने की विनती की है अत अब मेरे लिए जयपुर चातुर्मास हेतु जाना सम्भव नही है । इस पर म सा से काफी विनती की गई कि जयपुर चातुर्मास हेतु आपका पधारना अति आवश्यक है । परन्तु पूज्य आचार्य म सा ने अपनी असमर्थता प्रकट कर दी । अत डोली वालो को वापस भेज कर सम्पतमलजी मेहता जयपुर आ गये ।

इसी बीच सघ मत्री श्री नरेन्द्रकुमार लूणावत ने राता महावीरजी मे पूज्य आचार्य म सा गुणरत्न सूरीजी से भी कोई दो योग्य साधु जयपुर चातुर्मास हेतु भेजने की विनती की लेकिन उन्होने भी उनका चातुर्मास पालनपुर होने की वजह से अपनी असमर्थता प्रकट कर दी । इसी प्रकार इस वर्ष इतने अधिक प्रयत्न व प्रयास करने के बावजूद एव फाइनल हुए चातुर्मास की इस प्रकार विकट स्थिति बन जाने तथा अन्त मे बहुत कम समय होने से कोई दूसरे साधु-साध्वी महाराज के जयपुर पहुँचने मे कठिनाई होने के कारण सघ की महासमिति तथा सघ के प्रमुख लोगो की एक सयुक्त मीटिंग दिनाक 17 6 90 को बुलाई गई जिसमे यह निश्चय किया गया कि दिल्ली मे विराजित साध्वीजी महाराज से सम्पर्क किया जावे या खरतरगच्छ की साध्वीजी म सा जो जयपुर मे विराजित हैं उनसे विनती की जावे या किसी योग्य श्रावक को पर्युषण पर्व पर बुलाया जावे ।

अत दिल्ली के आगेवानो से साध्वी म सा के बारे मे जानकारी को गई परन्तु उनका अल्प समय मे जयपुर आना कठिन था । अत जयपुर विराजित पूज्य साध्वीजी म सा अविचल श्रीजी से विनती करने का निश्चय हुआ । अत सघ के अध्यक्ष श्री कपिल भाई, सघ मत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, रणजीतसिंह भण्डरी, मनोहरमलजी लूणावत तथा गुणवन्तमलजी साड तथा श्राविकाओ की ओर से श्रीमती पुष्पा बहिन, लाड बाई शाह, मदन बाई साड, सिरहकुमारी लूणावत एव अन्य श्राविकायें पूज्य साध्वीजी महाराज से विनती करने गये और उनसे चार महीने की चतुदर्शी तथा तथा पर्युषण पर्व के आठो दिन साध्वीजी म सा को आत्मानन्द सभा भवन मे प्रवचन हेतु भेजने की विनती की । उन्होंने इस पर विचार कर शीघ्र उत्तर देने

का आश्वासन दिया । अतः पुनः संघ के अध्यक्ष कपिल भाई, संघ मंत्री नरेन्द्रकुमार लूणावत, मनोहरमलजी लूणावत एवं चिमन भाई मेहता पूज्य साध्वी अविचल श्रीजी म. सा. से मिले । इस पर पूज्य साध्वी म. सा. ने संघ की विनती को स्वीकार करते हुए आत्मानन्द सभा भवन मे प्रत्येक चर्तुदशी तथा पर्युषण पर्व मे प्रवचन करने हेतु साध्वीजी म. सा. को भेजने की आज्ञा प्रदान की । जिसके लिए संघ के आगेवानों द्वारा म. सा. का आभार व्यक्त किया गया । इस अवसर पर इस स्वीकृति के लिए पूज्य साध्वी म. सा. का श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ पुनः हार्दिक आभार प्रकट करता है ।

चातुर्मासिक आराधनायें :

इस प्रकार इस वर्ष चातुर्मास काल में प्रत्येक चतुर्दशी को पूज्य साध्वी म. सा. के बड़े रोचक एवं प्रभावशाली प्रवचन हो रहे हैं । साथ ही श्री नेमीनाथ प्रभु के जन्म व दीक्षा तथा पार्श्वनाथ भगवान के मोक्ष कल्याण के उपलक्ष्य में दिनांक 26 जुलाई से 30 जुलाई 90 तक विभिन्न पूजाओं का आयोजन किया गया जो सानन्द सम्पन्न हुआ । अब पर्वाधिराज पर्युषण पर्व भी पूज्य साध्वी प्रियदर्शना श्रीजी म. सा. की निश्रा में सम्पन्न हो रहा है ।

पिछले चातुर्मास से अब तक की मुख्य-मुख्य घटनाओं का विवरण देने के पश्चात् अब मैं आपको इस नगर के प्राचीन मन्दिरों, उपाश्रयों एवं अन्य संस्थाओं की गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत कर रहा हूँ—

श्री सुमतिनाथ जिन मन्दिर :

संवत 1784 में स्थापित जयपुर नगर के इस प्राचीन मन्दिर की व्यवस्था बहुत सुन्दर ढंग से सम्पन्न हो रही है एवं प्रति वर्ष दर्शन पूजन करने वालों की संख्या भी बढ़ती ही जा रही है । मूलनायक श्री सुमतिनाथ भगवान्, श्री महावीर स्वामी की कार्योत्सर्ग प्रतिमा, श्री जयवर्द्धन पार्श्वनाथ भगवान् एवं अधिष्ठायक श्री मणिभद्रजी आदि इस मन्दिर के मुख्य आकर्षण है इस मन्दिर में चित्रकारी व कांच का अति सुन्दर कार्य है एवं प्रतिदिन यहां सामूहिक स्नात्र पूजा आयोजित की जाती है । इस वर्ष मन्दिर के देवद्रव्य खाते में रु. 1,66,717.88 की आय व व्यय रु. 76,073.64 हुआ । इसके अतिरिक्त कुछ पूजा सामग्री भेंट स्वरूप भी प्राप्त हुई । इस मन्दिर का वार्षिकोत्सव इस वर्ष बड़ी धूमधाम से दिनांक 3 जून, 1990 को मनाया गया, जिसमें सतरह भेदी पूजा पढ़ाई गई एवं प्रथम बार साधर्मी वात्सल्य का आयोजन भी किया गया जो बहुत सुन्दर ढंग से सम्पन्न हुआ ।

श्री सीमन्धर स्वामी मन्दिर, जनता कॉलोनी, पांच भाइयों की कोठी, जयपुर :

सन् 1985 में प्रतिष्ठित इस मन्दिर की व्यवस्था सुन्दर ढंग से सम्पन्न होती है । इस वर्ष इस मन्दिर के काम की गति देकर रंग मण्डप आदि का कार्य कराया जा रहा है और काफी काम पूरा हो चुका है और आशा है बाकी कार्य शीघ्र ही पूरा करा दिया जायेगा । इस मन्दिर का वार्षिक उत्सव दिनांक 25-11-89 को सत्रह भेदी पूजा एवं साधर्मी वात्सल्य आयोजित कर धूमधाम के साथ मनाया गया । इस वर्ष इस मंदिर की आय रु. 10,606.45 एवं व्यय रु. 11,757.16 हुआ । मन्दिर के निर्माण खाते में इस वर्ष आय रु. 31,074 एवं व्यय रु. [illegible] हुआ । श्रीमान [illegible] जिनकी इस मन्दिर की व्यवस्था [illegible] सराहनीय है ।

श्री रिखवदेव भगवान् मंदिर बरखेडा तीर्थ

इस तीर्थ की व्यवस्था भी सुचारु रूप से चल रही है। इस वर्ष तीर्थ की कुल आय रु 9,835 85 व व्यय रु 7,273 45 हुआ। इस तीर्थ का वार्षिक उत्सव दिनाक 4-3-90 को सम्पन्न हुआ, जिसमे प्रात कालीन सेवा पूजा के बाद श्री रिखवदेव पच कल्याण पूजा एव बारह बजे से साधर्मिक वात्सल्य का आयोजन सम्पन्न हुआ। वर्तमान मे श्री गुणवतमलजी साड इस मन्दिर की व्यवस्था समिति के सयोजक हैं, एव श्री ज्ञानचदजी टूकलिया स्थानीय सयोजक हैं।

इस तीर्थ पर एक कमरा श्रीमती सुरज बाई ललवाणी द्वारा बनवाने की काफी दिनो से भावना थी। अत सघ की महा समिति ने उनको इसकी स्वीकृति प्रदान की एव उन्होने एक कमरा बनवाकर दिनाक 4-3-90 को इस तीर्थ को भेंट किया है जिसमे करीब रु 26,000 00 का व्यय किया है। श्री जैन-श्वेताम्बर तपाच्छ सघ द्वारा तीथ के वार्षिकोत्सव पर श्रीमती सूरज बाई का शाल ओढाकर बहुमान भी किया गया। आज इस अवसर पर पुन श्री जैन श्वे तपागच्छ सघ इस काय के लिए उनका आभार प्रगट करता है। साथ ही सघ द्वारा भी वहाँ इस वर्ष कुछ निर्माण कार्य कराया गया जिसमे करीबन रु 9,282 95 का व्यय हुआ है। इसमे स्नान घर व सुविधाए व परकोटे की दीवारें एव अन्य कार्य कराया गया है।

श्री शान्तीनाथ जिनालय, चदलाई

इस मदिर की व्यवस्था भी वर्ष भर सुन्दर ढग से सम्पन्न होती है। श्री पुखराजजी जैन इस मन्दिर की व्यवस्था समिति के सयोजक हे। इस मन्दिर का वार्षिकोत्सव दिनाक 17-11-89 को सम्पन्न हुआ, जिसमे पूजा पढाई गई व साधर्मीवात्सल्य आयोजित किया गया। इस मदिर की इस वर्ष की आय रु, 440 15 एव रु 2,494,35 व्यय हुआ।

श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला

श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला का कार्य भी वर्ष भर सुचारु रूप से चल रहा है। इस खाते मे इस वर्ष कुल आय रु 21,290 52 की हुई, एव व्यय रु 22,177 35 का हुआ इसके अतिरिक्त फोटो लगाने की योजना से इस वर्ष रु 17,765 00 एव स्थाई मितियो से रु 6671 00 की आय हुई। आसोज माह की ओली की आराधना एक सद्गृहस्थ की ओर से एव चैत्र मास की ओली की आराधना श्री प्रकाश चन्दजी मेहता की ओर से सम्पन्न हुई जिसके लिए महासमिति उनका आभार व्यक्त करती है।

इस वर्ष इस खाते मे जीर्णोद्धार हेतु रु 1,51,000,00 की विशेष आय हुई, जिसमे से रु, 51,000 00 वर्ष 89-90 मे प्राप्त हुआ एव बाकी रुपया वर्ष 90-91 मे प्राप्त हो चुका है। साथ ही आयम्बिल शाला की बापू बाजार स्थित दुकान का किराया भी 1 अप्रैल, 1990 से रु 226 31 के बजाय बढाकर रु 1500 00 प्रति माह हो गया है। अत यह खाता अब पूर्णतया टूट से मुक्त हो गया है।

जैन श्वेताम्बर भोजन शाला

आचार्य कलापूर्ण सूरीजी म सा की प्रेरणा से स्थापित यह भोजन शाला भी सुचारु रूप से चल रही है। इसमे बाहर से आने वाले साधर्मी बन्धुओ, विद्यार्थियो एव सघो आदि के भोजन की व्यवस्था होती है। साथ ही स्थानीय साधर्मी बन्धुओ के लिए भी भोजन की व्यवस्था शुरू कर दी गई है। महासमिति इस भोजन शाला को और भी

अधिक सुव्यवस्थित करने के लिए प्रयत्नशील है। जिसमें आप सभी का सहयोग अपेक्षित है। इस वर्ष भोजन शाला की कुल आय रु, 36,502.50 एवं व्यय रु. 41,451.46 पैसे हुआ। यद्यपि इस खाते में अभी व्यय आय से अधिक है, परन्तु महासमिति भोजन शाला की आय बढ़ाकर एवं व्यय पर नियंत्रण कर इस टूट को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील है।

श्री साधारण खाता :

यह खाता बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं व्यापक खर्चे वाला है इसमें मुख्य रूप से साधु-साध्वियों की व्यवस्था एवं विहार खर्च, उपाश्रय सम्बन्धी खर्चे, साधार्मिक भक्ति उद्योग शाला आदि व्यय शामिल हैं। इस वर्ष इस खाते में कुल आय रु. 96,650,95 हुई एवं व्यय रु. 51,109.27 हुआ। इस प्रकार इस खाते में रु. 45,549.68 पैसे की शुद्ध बचत रही एवं इस प्रकार यह खाता इस वर्ष भी टूट से मुक्त रहा है। जो सन्तोष प्रद विषय है।

श्री ज्ञान खाता, पुस्तकालय, धार्मिक पाठशाला :

करीब दो वर्ष से योग्य शिक्षक की सेवा प्राप्त होने से पाठशाला भी नियमित रूप से चल रही है। बच्चों में धार्मिक शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करने हेतु विगत पर्युषण के पश्चात् दि. 1 नवम्बर से 5 नवम्बर 1989 तक बाल-मुनि श्री धर्मरत्न सागरजी म. सा. की प्रेरणा से धार्मिक संस्कार शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें करीबन 50 बच्चों ने उत्साह पूर्वक भाग लिया। साथ ही बच्चों को पूज्य म. सा. की प्रेरणा से प्रभावना आदि देकर उनका उत्साह बढ़ाया जा रहा है। अन्तिम में इन [illegible] प्रोत्साहन व पारितोषिक देने हेतु एक कोष की स्थापना की गई है। परन्तु फिर भी पाठशाला में आने वाले बच्चों की संख्या संघ को देखते हुए सन्तोषजनक नहीं है। अतः महासमिति की ओर से आपसे निवेदन है आप अपने बच्चों को धार्मिक पाठशाला में अध्ययन के लिये अवश्य भेजें।

साथ ही पुस्तकालय भी प्रति दिन सायंकाल 7 से 9 बजे तक सुचारू रूप से चल रहा है। इस वर्ष इस खाते में कुल आय रु. 24,217.70 एवं व्यय रु, 7867.05 का हुआ। इस वर्ष इस खाते से म. सा. की भावना अनुसार पुस्तक प्रकाशन हेतु रु. 4,000 00 सागर अमृत ट्रस्ट, बम्बई के लिए भी स्वीकृत किया गया।

श्री जैन श्वे. तपागच्छ उपाश्रय :

प्रस्तावित नये मन्दिर के अग्र भाग में निर्मित हो रहे उपाश्रय का कार्य भी बहुत कुछ पूरा हो चुका है, एवं यह उपाश्रय अब संघ के उपयोग के लिए तैयार हो चुका है एवं दिनांक 29-4-90 को इसका विधिवत उद्घाटन भी हो चुका है। इस उपाश्रय के बन जाने से अब पुरुषों व महिलाओं दोनों को धार्मिक आराधना करने की पूर्ण सुविधा उपलब्ध हो गई है। इसके निर्माण कार्य पर इस वर्ष व्यय रु. 139356.98 हुआ है, और इस प्रकार अब तक कुल करीबन रु. 3,50,000.00 व्यय हो चुका है। अब इस उपाश्रय में बाहर की साइड का एवं नीचे की साइड व छत के ऊपर फर्श आदि का काम बाकी है। जो महासमिति आपके सहयोग से शीघ्रातिशीघ्र पूरा करवाना चाहती है। अतः आप लोगों से इस कार्य में पूर्ण सहयोग देने की विनती है। इस उपाश्रय के निर्माण की [illegible] के लिए [illegible] श्रीमान् [illegible]

प्रगट करती है, एव उन्हे धन्यवाद प्रेषित करती है। साथ ही महासमिति उपाश्रय के निर्माण कार्य मे सक्रिय सहयोग देने के लिए श्री चिन्तामणिजी ढढ्ढा, श्री राकेशकुमारजी मोहनोत, श्री गुणवन्तमलजी साड एव श्री सुरेशकुमारजी मेहता को भी धन्यवाद प्रेषित करती है।

श्री सोढाला मन्दिर

सोढाला मे जो जमीन श्रीमती शशि मेहता द्वारा सघ को भेट की गई है। उस पर मन्दिर व उपाश्रय बनाने का निर्णय लिया जा चुका है और इस कार्य को गति देने के लिए पिछले वर्ष महासमिति द्वारा श्री प्रकाशचन्दजी बाठीया को सयोजक भी नियुक्त किया जा चुका है। महा समिति की हमेशा यह भावना रही है कि वहाँ शीघ्र ही निमाण कार्य प्रारम्भ हो परन्तु इस जमीन की अभी तक विधिवत् ट्रान्सफर की कार्यवाही भेंटकर्ता द्वारा पूरी न कराने के कारण यह कार्य प्रारम्भ नही कराया जा सका है। यद्यपि इस सम्बन्ध मे दो बार पत्र द्वारा आवश्यक कागजात उपलब्ध कराने के लिए भेंटकर्ता को लिखा भी जा चुका है, परन्तु उनके द्वारा कागजात उपलब्ध न करने के कारण यह काय अब तक प्रारम्भ नही हो सका है। विधिवत् जमीन ट्रासफर की कार्यवाही पूरी होते ही यह कार्य शीघ्र ही शुरू करा दिया जायेगा।

श्री मणिभद्र प्रकाशन

इस सघ के वार्षिक मुखपत्र "मणिभद्र" के 31वें पुष्प का प्रकाशन भी हर वर्ष की भाति सुन्दर ढग से सम्पन्न हुआ एव उसकी छपाई आदि के स्टाइल मे भी कुछ परिवर्तन कर इसे अधिक सुन्दर बनाने का प्रयास भी किया गया। आज पुन आपकी सेवा मे इसी मुखपत्र के 32वे पुष्प का विमोचन किया जा रहा है। जिसमे आचार्यो, साधु-साध्वियो एव विद्वान लेखको के लेख एव सघ की वर्ष भर की गतिविधियो का विवरण प्रकाशित किया गया है। महासमिति इसके प्रकाशन मे सक्रिय सहयोग देने के लिए सम्पादक मण्डल के सभी सदस्यों एव विज्ञापनदाताओ का हार्दिक आभार प्रगट करती है।

आर्थिक स्थिति

वतमान मे सघ की आर्थिक स्थिति काफी सुदृढ है। इस वर्ष कुल आय रु 6,66,019 21 एव व्यय रु 4,69,502 19 हुआ है। इस वर्ष पिछले वर्षो की अपेक्षा सर्वाधिक आय हुई है। आय-व्यय विवरण व चिट्ठा सलग्न है।

श्री आत्मानन्द सेवक मडल

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल का कार्य भी अत्यन्त प्रशसनीय रहा। पिछले चतुर्मास से लेकर अब तक सम्पन्न हुए सभी धार्मिक कार्य-क्रमो मे विशेपकर वार्षिकोत्सवो की व्यवस्था, धार्मिक शिक्षा शिविर, उपाश्रय उद्घाटन समारोह एव मन्दिरजी की वर्षगाठ पर हुए साधर्मिवात्सल्य आदि से मण्डल का हमे जो पूर्ण सक्रिय सहयोग मिला है, इसके लिए महासमिति मण्डल के सभी पदाधिकारियो एव सदस्यो को धन्यवाद प्रेषित करती है।

अकेक्षक

महासमिति हमारे सघ के अकेक्षक श्रीमान् राजेन्द्र कुमारजी चत्तर के प्रति भी आभार प्रगट करती है। आप इस सस्था के अकेक्षक व आयकर सम्बन्धी कार्य नि स्वार्थ

भाव से कई वर्षों से कर रहे हैं। आपके द्वारा प्राप्त आय-व्यय विवरण एवं आडिट रिपोर्ट मूल रूप से इस कार्य विवरण के साथ प्रकाशित की जा रही है।

कर्मचारी वर्ग :

इस संघ के अधीन समस्त कर्मचारी वर्ग का भी इस संघ को पूर्ण सहयोग मिला है और इसी के कारण संघ की सभी गतिविधियां सुन्दर ढंग से सम्पन्न हो रही हैं। महासमिति ने भी उनकी सेवाओं और कठिनाइयों के प्रति पूर्ण सहानुभूति रखी है। और प्रति वर्ष उनके वेतनों में वृद्धि कर एवं इनाम आदि देकर आर्थिक लाभ भी पहुंचाया है। कर्मचारी वर्ग का जो सहयोग हमें मिला है उसके लिए महासमिति कर्मचारियों को धन्यवाद देती है।

अन्त में इस वर्ष के कार्य संचालन में प्राप्त सहयोग के लिए महासमिति संघ के सभी सदस्यों का आभार व्यक्त करती है। एवं आशा करती है कि आप सभी का इस प्रकार का तन मन धन से सहयोग भविष्य में भी प्राप्त होता रहेगा। साथ ही श्री गोपीचंद जी चोरड़िया को ध्वनि प्रसारण यंत्र की व्यवस्था करने एवं आज की जन्मोत्सव की प्रभावना का लाभ एक भाग्यशाली परिवार द्वारा लिये जाने हेतु महासमिति उनका भी आभार व्यक्त करती है।

संघ सेवा में रहते हुए महासमिति ने अच्छे से अच्छा कार्य करने की भरसक कोशिश की है परन्तु फिर भी अगर कोई जाने अनजाने में भूल हुई हो तो महासमिति इसके लिए खेद प्रगट करती है। इन्हीं शब्दों के साथ वर्ष 1989–90 का यह वार्षिक कार्य विवरण आपकी सेवामें प्रस्तुत कर के अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ।

जय मणिभद्र।

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ,

चिट्ठा
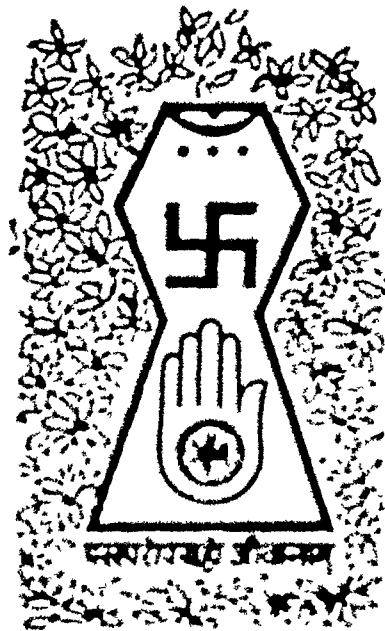
कर निर्धारण

गत वर्ष की रकम	दायित्व		चालू वर्ष की रकम
6,70,734 63	श्री सामान्य कोष		7,79,307 10
	पिछला शेष	6,70,734 63	
	इस वर्ष का लाभ आय व्यय खाते में से लाया गया	1,08,572 47	
97,513 00	श्री स्थायी मिति आयम्बिल शाला		1,04,184 00
	पिछला शेष	97,513 00	
	इस वर्ष में जमा रकम	6,671 00	
2,668 00	श्री स्थायी मिति जोत		2,970 00
	पिछला शेष	2,668 00	
	इस वर्ष जमा में	302 00	
1,860 00	श्री सम्वत्सरी पारना कोष		1,860 00
3,844 30	श्री नवपद ओलीजी पारना कोष		3,844 30
16,120 05	श्री श्राविका संघ खाते जमा		16 120 05
2,500 00	श्री ज्ञान स्थायी कोष		19,231 00
	पिछला शेष	2,500 00	
	पाठशाला	16,731 00	

घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

31–3–90 को

वर्ष 1990–91

गत वर्ष की रकम	सम्पत्तियां		चालू वर्ष की रकम
26,748.45	**श्री स्थायी सम्पत्ति**		26,748.45
	लागत पिछले वर्ष के अनुसार		
31,096.50	**श्री विभिन्न लेनदारियां**		74,647.50
	श्री उगाई खाता	618.50	
	श्री अग्रिम खाता	73,302.00	
	रा. स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड	727.00	
15,015.79	**श्री बरखेड़ा मन्दिर**		
	श्री बैंकों में व रोकड़ बाकी		
6,30,904.10	(क) स्थायी जमा खाता		6,58,623.80
	1–स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर जौहरी बाजार	6,09,768.80	
	2–देना बैंक	48,855.00	
1,435.04	(ख) चालू खाता		1,435.04
70,457.35	(ग) बचत खाता		1,83,577.68
	1–बैंक ऑफ बड़ौदा	295.19	
	2–बैंक ऑफ राजस्थान	2,436.36	
	3–स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर	1,80,846.13	

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ,

चिट्ठा

कर निर्धारण

गत वर्ष की रकम	दायित्व	चालू वर्ष की रकम
678 94	श्री रमेशचन्द भाटिया	678 94
—	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार फण्ड	51 000 00
1,775 22	श्री बरखेड़ा साधारण खाते	—
7 97 694 14		9,79,195 39

नोट उपरोक्त चिट्ठे मे संस्था की पुरानी चल व अचल सम्पत्ति जैसे बर्तन, मंदिर की पुरानी जायदाद व जेवर वगैरह शामिल नही है, जिनका कि मूल्यांकन नहीं किया गया है।

कपिल भाई के० शाह	नरेन्द्रकुमार लूणावत	मोतीलाल कटारिया
अध्यक्ष	संघ मन्त्री	अर्थ मन्त्री

घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

31–3–90 को

वर्ष 1990–91

गत वर्ष की रकम	सम्पत्तियां	चालू वर्ष की रकम
22,036 91	श्री रोकड़ बाकी	34,162 92
7,97,694.14		9,79,195.39

वास्ते चनर एण्ड कम्पनी
Sd/– आर० के० चनर
(आर० के० चनर)
स्वामी

सौभाग्यचन्द्र बाफना
हिसाब निरीक्षक

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ,

आय-व्यय खाता

कर निर्धारण

गत वष का खच	व्यय		इस वष का खच
73,935 24	श्री मन्दिर खर्च खाते नाम		78,567 99
	आवश्यक खच	58,837 73	
	विशेष खच	19,730 26	
2,452 00	श्री मणिभद्र भण्डार खर्च खाते नाम		4,825 50
61,709 46	श्री साधारण खर्च खाते नाम		53,556 64
	आवश्यक खच	34,080 84	
	विशेष खच	19,475 80	
12,638 55	श्री ज्ञान खाते नाम		7,867 05
	आवश्यक खच	5,042 45	
	विशेष खच	2,824 60	
28,223 51	श्री भोजन शाला खाते नाम		41,451 46
	श्री वरखेडा मन्दिर खाते नाम		22,289 24
	पिछला खच	15,015 79	
	इस वर्ष खच	7,273 45	
	श्री वरखेडा साधर्मी वात्सल खाते नाम		27,533 65
244 00	श्री जीवदया खाते नाम		100 00
34,975 20	श्री उपाश्रय जीर्णोद्धार खाते नाम		1,39,356 98
26 123 20	श्री आयम्बिल खाते नाम		22,177 35
	आवश्यक खच	22,025 35	
	विशेष खच	152 00	
	श्री आयम्बिल फोटो खाते नाम		1,001 00
12,451 86	श्री जनता कॉलोनी मन्दिर खाते नाम		11,757 16

घीवालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

1–4–89 से 31–3–90 तक

वर्ष 1990–91

गत वर्ष की आय	आय		इस वर्ष की आय
1,64,749.38	**श्री मन्दिर खाते जमा**		1,67,158.03
	श्री भण्डार खाता	1,18,269.72	
	श्री पूजन खाता	9,417.61	
	श्री किराया	960.00	
	श्री ब्याज	36,962.40	
	श्री चंदलाई	440.15	
	श्री जीर्णोद्धार	315.15	
	श्री जोत	793.00	
18,921.73	**श्री मणिभद्र भण्डार खाते जमा**		32,135.69
1,04,743.07	**श्री साधारण खाते जमा**		98,521.95
	श्री भेंट खाता	63,654.65	
	श्री किराया खाता	6,507.00	
	श्री मणिभद्र प्रकाशन	7,282.00	
	श्री उद्योग शाला	520.00	
	श्री ब्याज खाता	15,760.30	
	श्री चंदलाई	1,871.00	
	श्री साधर्मी खाता	2,927.00	
14,831.70	**श्री ज्ञान खाते जमा**		24,217.70
	श्री भेंट खाता	20,580.30	
	श्री ब्याज खाता	3,637.40	
28,828.50	**श्री भोजनशाला खाते जमा**		36,502.50
—	**श्री बरखेड़ा मन्दिर खाते जमा**		9,335.55
—	**श्री बरखेड़ा साधर्मी वात्सल्य खाते जमा**		27,444.12
	गत वर्ष का जमा	1,755.22	
	इस वर्ष की आय	25,688.90	

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ
घीवालो का रास्ता
जयपुर

अंकेक्षको का प्रतिवेदन

विषय —दिनाक 31–3–90 को समाप्त होने वाले वर्ष का
अकेक्षण प्रतिवेदन

1 हमे वे सभी सूचनाएँ व स्पष्टीकरण प्राप्त हुए हैं, जिनकी हमे अकेक्षण हेतु हमारी जानकारी के लिए आवश्यक थी ।

2, सस्था का चिट्ठा व आय-व्यय खाता जिसका उल्लेख हमने हमारी रिपोर्ट मे किया है, लेखा पुस्तको के अनुरूप है ।

3 हमारी राय मे, जैसा कि सस्था की पुस्तको से प्रकट होता है, सस्था ने आवश्यक पुस्तकें रखी हैं ।

4 हमारी राय मे प्राप्त सूचनाओ एव स्पष्टीकरण के आधार पर बनाया गया चिट्ठा व आय व व्यय का हिसाब सही व उचित चित्र प्रस्तुत करता है ।

वास्ते–चतर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स

(आर के चतर)
स्वामी

श्री जैन श्वे. तपागच्छ संघ, जयपुर की महासमिति

(कार्यकाल सन् 1988 से 1991)

क्र. सं.	नाम व पता	पद	दूरभाष निवास	दूरभाष कार्यालय
1.	श्री कपिल भाई केशवलाल शाह इण्डियन वूलन कारपेट फैक्ट्री पानों का दरीबा	अध्यक्ष	49910	45033
2.	श्री मदनराज सिंघवी डी-140, बनीपार्क	उपाध्यक्ष	62845	62845
3.	श्री नरेन्द्रकुमार लूनावत 2135-36, लूनावत हाउस लूनावत मार्केट, हल्दियों का रास्ता	संघमंत्री	561882	561446
4.	श्री मोतीलाल कटारिया दूगड़ बिल्डिंग, एम. आई. रोड	अर्थमंत्री		74919
5.	श्री जीतमल शाह शाह बिल्डिंग, चौड़ा रास्ता	भण्डाराध्यक्ष धा. शाला व भोजनशाला मंत्री	564476	564476
6.	श्री [illegible] पालरेचा [illegible] एजेन्सीज [illegible] मार्केट	मन्दिर मंत्री	562063	564386
7.	श्री [illegible] मोहनोत 4459, कुन्दीगरों के भैरूजी का रास्ता	उपाश्रय मंत्री	561038	561038
8.	श्री [illegible] [illegible] के सामने, [illegible] [illegible] का रास्ता	[illegible] मंत्री	561080	561080

आयम्बिल शाला फोटो योजना में सहयोगकर्ता

[नकरा प्रति फोटो रु० 1111]

दिनाक 1-4-89 से 31-3-90 तक

फोटो	भेंटकर्ता
स्व श्री प्रेमचन्दजी ढढ्ढा	शुभेच्छु हस्ते हीराचन्दजी वैद
स्व श्रीमती पान बाई ढढ्ढा	शुभेच्छु हस्ते हीराचन्दजी वैद
स्व श्रीमती शान्तिकुमारी लूणावत	श्री पतनमलजी नरेन्द्रकुमारजी लूणावत
स्व श्री जतनमलजी लूणावत	धर्मपत्नी श्रीमती गुमान कँवर लूणावत
स्व श्री विमलकुमारजी पोरवाल	श्री सोनराजजी पोरवाल
स्व श्री शान्ति भाई मगलचन्दजी चौधरी	हस्ते महेन्द्रजी
स्व श्री सूरज भाई मगलचन्दजी चौधरी	हस्ते श्री श्रीपालजी
स्व श्री नेमीचन्दजी कोठारी	हस्ते श्रीमती शान्तादेवी आकोला
स्व श्री कल्याणमलजी भण्डारी	हस्ते श्रीमती गुणसुन्दर बाई भण्डारी
स्व श्री जयन्तीलाल गगल भाई शाह	श्रीमती रूखी बहन
स्व श्री हीराचन्दजी चौरडिया	श्रीमती कमलादेवी चौरडिया
स्व श्री हरीशचन्दजी मेहता	श्री महेन्द्रचन्दजी मेहता
स्व श्रीमती उगम कँवर मेहता	श्री महेशजी मेहता
स्व श्री शिखरचन्दजी पालावत	धर्मपत्नी श्रीमती राजकुमारी पालावत एव परिवार
स्व श्री इन्दरमलजी कोठारी	श्री हीराचन्दजी कोठारी
श्री राजेन्द्रकुमारजी लोढा	श्री सजयकुमारजी लोढा

DEEP
Washing Machine
Cooler Equipped with
DURABLE
FAN & PUMP
GEC
Fan & Pump
BATLIBOI
BATLIBOI
• Washing Machine
• Microwave Oven
• Cooking Range
Lamp & Tube
GENELEC
Room Heater
Sunflo
Ceiling Fan & Fresh Air Fan
DURABLE
GEC
Iron & Toaster
SPHEREHOT
Mixer, Grinder & Juicer
Maharaja
Sumeet
Water Heater
SPHEREHOT
DURABLE
DIAL
75611
FOR
3 2 1 4 5 6 7 8 9 0
Service Centre For
Mixer, Cooler, Iron, Toaster Water Heater, Washing Machine and All Indian & Imported Electrical Appliances
Deepak Enterprises
Opp G.P.O. M.I.Road JAIPUR-302001 Tel:off.75611 Res.73140

WITH BEST COMPLIMENTS

FROM :
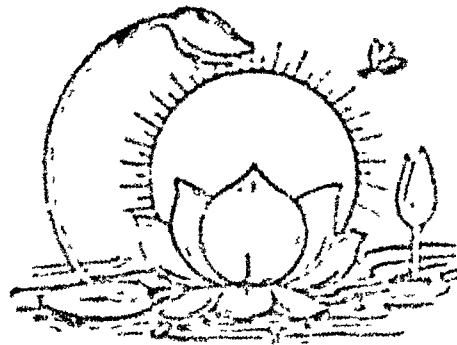
Navin Chand Shah

M/s SAMEER EXPORTS

14C, DHANDHIYA HOUSE

HALDIYON KA RASTA

JAIPUR - 302 003

पर्वाधिराज पर्युषण महापर्व के उपलक्ष्य मे
हार्दिक शुभकामनाये

विषभ टेलर्स

(शूट, सफारी स्पेशियलिस्ट)

पर्युषण महापर्व के उपलक्ष्य मे हार्दिक शुभकामनाएँ

पर्वाधिराज पर्युषण पर्व पर

हार्दिक शुभकामनाओं सहित

❋ रतनचन्द सिंघी

❋ राजीव सिंघी

❋ नवीन सिंघी

❋ अशोक सिंघी

दूसरा चौराहा, गुन्दीगर भैरूंजी का रास्ता

जयपुर

फोन : [illegible]